UNIVERSAL LIBRARY

OU_180841

UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 82 | B 48 S Accession No. G. H. 963

Author देव, गोपालचन्द्र ।

Title सरजा शिवाजी ।

This book should be returned on or before the date last marked below.

सरजा शिवाजी

(मौलिक नाटक)

लेखक

श्री गोपालचन्द्र देव

प्रकाशक

भारती साहित्य मंदिर

दिल्ली

प्रकाशक
भारती साहित्य मंदिर
दिल्ली ।

मूल्य
डेढ़ रुपया

मुद्रक
सुरेन्द्र प्रिंटर्स लि०,
दिल्ली ।

नाटक के प्रमुख पात्र

पुरुष पात्र

शिवाजी	स्वराज्य-संस्थापक
शाहजी	शिवाजी के पिता
दादा कोणदेव	शिवाजी के शिक्षक
तानाजी मूलसरे	शिवाजी का मिंत्र और महायक
आबाजी सोमदेव	शिवाजा का मित्र
भूषण	वीररस के प्रसिद्ध कवि
शेलारमामा	वृद्धवीर सेनानी
समर्थ स्वामी रामदास	शिवाजी के पथ-प्रदर्शक
अली आदिलशाह	बीजापुर का सुलतान
मुरारपन्त	बीजापुर का प्रधान मंत्री
अफजलखां	बीजापुर का सेनापति
गोपीनाथ	अफजलखाँ का दूत
औरंगजेब	मुगल बादशाह
शाइस्ताखाँ	मुगल सेनापति
उदयभानु	सिंहगढ़ का अध्यक्ष

स्त्री पात्र

जीजाबाई	शिवाजी की माता
सूईबाई	शिवाजी की पत्नी
सुलताना	अफजलखाँ की पुत्री

सरजा शिवाजी

प्रथम अंक

दृश्य पहला

समय—प्रातःकाल । स्थान—पूना के पास एक पर्वत ।
(एक शिलाखण्ड पर बैठा हुआ आबाजी सोमदेव । आयु १५ वर्ष । एक चपल घोड़ा थोड़ी दूर पर एक वृक्ष से बँधा है)

आबाजी—(गाता है)

आसावरी

हमें गिरि तीखे तीर न मार ।
निर्मल झरना झर झर बहता करे स्वतन्त्र पुकार ।।
फूल खिले है, भौंरे गूजें, मीठी बहे बयार ।
कोयल कूजन करे डाल पर, कीट-पतंग विहार ।।
हमें दृश्य ये तनिक न भावें, शुक पिंजरे आहार ।
तड़प तड़प बन्धन में लेते, हम उसास मन मार ।।
आस-साध का द्वन्द्व हो रहा, ले चल अब उस पार ।
हो स्वाधीन उड़ें, विचरें, ले अपना देश उभार ।।

(कुछ रुक कर)

इस पर्वत पर प्रकृति की मधुर छटा अपना पूरा वैभव दिखाती है; परन्तु हमें यह पर्वत काटने को दौड़ता है । हमारा है भी क्या ? सारा भारत यवनों से आक्रान्त है। अत्याचार

और अनाचार की अग्नि धधक रही है। भारत की कुल विभूति, सारी सम्पत्ति, सम्पूर्ण शान्ति भस्मसात् हो रही है! कोई रक्षक नहीं! हम से तो ये निर्झर, ये वृक्ष, ये कीट-पतंग ही सुखी हैं! सब स्वाधीन हैं! केवल हम ही पराधीन हैं! सच-मुच, यह गिरी हृदय को बेध रहा है!

(फिर 'हमें गिरि तीखे तीर न मार' आदि गाना आरम्भ करता है। इतने में दो अश्वारूढ़ मावली बालक अभयजी और माधोजी आते हैं। आबाजी गाना बन्द कर देता है। अभयजी और माधोजी घोड़ों से उतरते हैं)

अभयजी : क्यों आबाजी! गाना क्यों वन्द कर दिया? तुम तो खूब गाते हो, गाना कहाँ से सीखा है?

आवाजी : आओ भाई! क्या गाता हूँ! गाना और रोना किसे नहीं आता?

माधोजी : आबाजी! जरा फिर गाओ न।

आबाजी : न भाई! अब न गाऊँगा। मैं अपने ही ध्यान में बैठा रहा और इतना समय बीत गया। आज शिवाजी भैया क्यों नहीं आए?

(घोड़ों पर चढ़े हुए किशोर शिवाजी और दादा कोणदेव का प्रवेश)

शिवाजी—हर हर महादेव।

सब—हर हर महादेव।

शिवाजी—चलो आबाजी! घोड़ा खोल लो। अभयजी, माधोजी, जल्दी करो! दादाजी आज दक्षिणी पहाड़ियों की ओर ले चलेंगे और अभिमन्यु की लड़ाई भी सुनाएँगे।

दादा कोणदेव—हाँ बच्चो ! शीघ्र चलो ।

(तीनों घोड़ों पर सवार होकर साथ चलते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य दूसरा

समय—**दोपहर** । स्थान—**बीजापुर**

(मुहम्मद आदिलशाह का दरबार । शाहजी और मुरारपन्त पास-पास बैठे हुए आपस में बातें कर रहे हैं । मुहम्मद आदिलशाह आवश्यक पत्रों पर हस्ताक्षर कर रहा है । द्वारपाल का प्रवेश)

द्वारपाल—**(सिर झुका कर)** बादशाह सलामत ! एक ब्राह्मण बाहर खड़ा हुजूर की सेवा में हाजिर होना चाहता है ।

आदिलशाह—**(कड़क कर)** जरा ठहरो !

(द्वारपाल काँप कर बाहर चला जाता है । थोड़ी देर बाद)

शाहजी—महाराज ! क्या आप एक ब्राह्मण को दर्शन करने का अवसर देंगे ?

आदिलशाह—अच्छा सिपहसालार साहब ! वह आ सकता है ।

(शाहजी द्वारपाल को बुलाते हैं, द्वारपाल आता है)

शाहजी—**(द्वारपाल से)** जाओ, ब्राह्मण को ले आओ ।

(द्वारपाल जाता है । पुजारी का प्रवेश)

पुजारी—**(आदिलशाह को प्रणाम करके)** जय हो महाराज को । दयानिधान ! मैं एक छोटे से मन्दिर का पुजारी हूँ । मेरा मन्दिर मुसलमानों ने छीन लिया है और वहाँ मस्जिद ········ ।

अफजलखां—(**बीच ही में रोक कर**) बस बस ओ बिरह्-मन ! ज़बान को लगाम दे । (**फ़ाजिलखां से**) फाज़िल ! इसे धक्के मार कर बाहर निकाल दो । (**फाजिलखां वैसा ही करता है । शाहजी, मुरारपन्त तथा अन्य हिन्दू सरदार दाँत पीसकर रह जाते हैं**)

(**पट-परिवर्तन**)

दृश्य तीसरा

समय—**दोपहर** । स्थान—**पूना**

(**शिवाजी का निवास-स्थान । शिवाजी भोजन कर रहे है, थाली के पास ही तलवार पड़ी है । जीजाबाई पास बैठी हैं ।**)

शिवाजी—माता जी ! ये यवन बेचारी गाय को क्यों मारते हैं ? क्या इनके मन में दया नहीं है ?

जीजाबाई—दया ! दया-कृपा यवनों के पास तक नहीं फटक सकती ! जब तुम गर्भ में थे, तो यवनों ने मुझे जो-जो यातनाएँ दीं, याद आते ही आँखों में खून उतर आता है ।एक दिन तो एक यवन सिपाही ने मेरा जूड़ा खींच लिया । (**शिवाजी तलवार पकड़ लेते हैं**) । तुम शान्ति से भोजन करो, मेरे वीर ! मुझे तुम पर पूरा भरोसा है । तुम्ही हिन्दुओं की डूबती नैया को पार लगाओगे । गौ, ब्राह्मण, स्त्री, पूज्यस्थानों की रक्षा तुम्हारे द्वारा ही होगी । ऐसा प्रतीत होता है मानों हिन्दुओं को साँप सूंघ गया हो । बेटा ! तुम ऐसा चक्र चलाना कि इन निर्जीवों में रक्त उबलने लगे । राम की भाँति असुरों का संहार तुम्हारे ही हाथ से होगा ! अवश्य होगा !!

(जीजाबाई गम्भीर हो जाती है। शिवाजी का मुख लाल हो जाता है, वे तन जाते है)

शिवाजी--माता जी ! तो पिता जी क्यों यवनों की नौकरी करते है ? क्यों नही स्वय ही राजा बन जाते ?

जीजाबाई--उन्हे यह काँटा चुभता ही नही, मेरे लाल ! वे तो प्रदेश जीत-जीत कर यवन-राज्य की सीमा बढ़ाते हैं। उन्हें कौन समझाए ?

शिवाजी--मै तो एक पल भी न ठहरूँ। मुहम्मद आदिलशाह के राज्य की ईंट-से-ईंट बजा दूं।

(शिवाजी भोजन समाप्त कर हाथ-मुँह धोते है। भृत्य का प्रवेश)

भृत्य--माता जी ! बीजापुर से मुरारपन्त जी आये है।

जीजाबाई--उन्हे आदर-सहित भीतर ले आओ।

(भृत्य जाता है)

शिवाजी--माताजी ! ये मुरारपन्त जी कौन है ?

जीजाबाई--पुत्र ! ये आदिलशाह के प्रधान-मन्त्री हैं। तुम्हारे पिता से इनकी बहुत मित्रता है।

(भृत्य सहित मुरारपन्त का प्रवेश, जीजाबाई और शिवाजी उठते है)

मुरारपन्त--बहिन जीजाबाई ! नमस्कार। कहो कुशल से तो हो। शिवाजी सुख से है न। **(शिवाजी अभिवादन करते है)** प्रसन्न रहो।

जीजाबाई--ईश्वर की अनुकम्पा से सब ठीक ही है, पन्त जी ! आज कैसे भूल पड़े ? आओ, भोजन तैयार है।

मुरारपन्त—नही, उसकी आवश्यकता नही। अभी एक किलेदार के यहाँ भोजन करके आ रहा हूँ। इधर एक राजकीय कार्य से आया था, सोचा, चलो शिवाजी से भेंट करता चलू। शाहजी ने भी कहा था कि पूना होते आना और शिवाजी को साथ लेते आना, उसे अब राज-दरबार मे आना-जाना चाहिये, अब वह किशोर हो गया है, शीघ्र ही युवा होने वाला है, अफजलखाँ का पुत्र फाजिल आता है या नही ! शिवाजी ! चलो, आज तुम्हे दरबार मे ले चले ओर बादशाह को सलाम कराएँ।

शिवाजी—(**घृणा के साथ**) छि ! थू !! हम हिन्दू ! बादशाह यवन। महायवन। हम गौ और ब्राह्मण के सेवक, वह उनका शत्रु। हमारा और उसका मेल कैसा। (**उत्तेजित होकर**) मै ऐसे व्यक्ति को कभी भी सलाम न करूँ ! मै तो उससे स्पर्श भी नही करना चाहता। मै उसे बादशाह ही नही मानता। आप सलाम करने को कहते है, मेरे मन मे तो यह बात आती है कि मै उसका सिर काट लू। (**बहुत उत्तेजित हो जाते है। हाथ तलवार की मूँठ पर पहुँच जाता है**)

मुरारपन्त—(**आश्चर्य के साथ**) है ! नही, मेरे बांके वीर नही। इतनी रुखाई अच्छी नही। देखो, तुम्हारे पिता और हम भी तो धर्म के पक्के समर्थक है। तो क्या हम वहाँ न जाएँ ? नही, ऐसा न कहो। अवश्य चलो। (**शिवाजी जीजाबाई की ओर देखने लगते है**)

जीजाबाई—मेरे वीर ! मेरे लाल ! तुम्हारी इच्छा नही, तो न जाओ, पर एक बार हो आओ। कोई हानि नही।

राजदरबार का रंग-ढंग देख आना। क्यों ?

शिवाजी—बहुत अच्छा, माता जी ! अवश्य जाऊँगा, पर सलाम कभी न करूँगा।

मुरारपन्त—नहीं शिष्टाचार नहीं छोड़ना चाहिए। चलो तैयार हो जाओ ।

(शिवाजी तैयार होकर साथ जाते है)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य चौथा

समय—**दोपहर** । स्थान—**घने जंगल में एक आश्रम**

(तीन शिष्य एक बड़े काष्ठपीठ के पास भूमि पर बैठे हैं)

पहला—आज गुरुवर ने हमें दीक्षान्त आज्ञा देनी है। हृदय उल्लास और उत्साह से भरा है। हमारे अहोभाग्य हैं !

दूसरा—हमारे प्रभु, समर्थ स्वामी सचमुच समर्थ स्वामी है। उनकी आज्ञा से हम आज कृतकृत्य होंगे।

तीसरा—मुझे तो ऐसा दिखाई देता है कि आचार्यवर हमें कोई गुरुतर अनुशासन देंगे।

पहला—गुरुतम ही क्यों न हो ? सब कुछ शिरोधार्य है !

('ओ३म् तत्सत्' 'ओ३म् तत्सत्' करते हुए समर्थ स्वामी रामदास वन के एक ओर से प्रविष्ठ होते हैं)

तीनों शिष्य : **(उठकर)** जय जय समर्थ स्वामी की ! जय जय गुरुवर की !! जय जय आचार्य पादों की !!! **(प्रणाम करते है)**

समर्थ स्वामी——चिरंजीव। तुम्हारी निष्ठा पूर्ण हो। मेरे कई पौधों में से तीन और पौधे फल लाए। उन फलों को आज सारा महाराष्ट्र आस्वादन करे। प्रिय शिष्यो ! जाओ, स्वतन्त्रता का संदेश घर-घर में पहुँचा दो। यह यज्ञ की अग्नि देश के कोने-कोने में प्रदीप्त कर दो। देश का बच्चा-बच्चा बन्धन-मुक्त होने के लिए तड़प उठे। देखना ! छूआछूत के भँवर में न फँस जाना। यह युग कर्तव्य-युग है। आलस्य और निराशा में पड़ी हुई महाराष्ट्र की वीर आत्माओं में जागृति का मन्त्र फूँक दो। तुम्हारी लगाई हुई आग इतनी प्रचण्ड हो कि उसमें सारी कायरता-कालिमा कट जाय; सारा मल धो जाय। जाओ, सच्चे सदेशवाहक बनो। परमपिता तुम्हारे पथ-प्रदर्शक होंगे।

(तीनों प्रणाम कर जाते हैं)

समर्थ स्वामी——अभी बहुत कमी है। स्वाधीनता की अग्नि सुलग तो चुकी है; पर उसे उद्दीप्त करके वाले एक रणवीर और प्रणवीर की कमी है। आहुति और घृत डालने वाले एक क्रान्तिकारी की आवश्यकता है। अच्छा, जगन्नियन्ता सुनेंगे ! सुनेंगे !!

(काष्ठपीठ पर बैठकर कुछ लिखने लगते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य पांचवां

समय—रात्रि। स्थान—आगरा

(एक महल की ऊपरी मंजिल में शाइस्ताखां मद्यपान कर रहा है)

(द्वारपाल का प्रवेश)

द्वारपाल—हजूर ! अनवरुद्दीन आए हैं।

शाइस्ताखां—अकेले ही हैं, या उनके साथ कोई और भी है ?

द्वारपाल–एक बेहोश सी सुन्दरी को उठाए हुए दो नौकर भी साथ हैं, हजूर !

शाइस्ताखां—ठीक है। जा, उन्हें जल्दी ऊपर भेज दे।

(द्वारपाल जाता है। मद्यपान पूर्ववत् है)

(एक सुन्दरी को उठाए हुए दो नौकरों के साथ अनवरुद्दीन का प्रवेश)

(तीनों शाइस्ताखां को सलाम करते हैं)

शाइस्ताखाँ—आओ, अनवरुद्दीन ! ठीक समय पर आये। कहो, इसने मंजूर किया या नही ?

अनवरुद्दीन—जनाव ! यह किसी प्रकार मानती ही नहीं ! यहाँ आती ही न थी। बड़ी मुश्किल से उठवा कर लाया हूँ। रास्ते में बेहोश हो गई है। **(सामने चौकी पर रखा हुआ गुलाब-जल उसके मुँह पर छिड़कता है; वह होश में आती है। पर सामने शाइस्ताखाँ आदि को देखकर फिर आँखें बन्द कर लेती है; पर तत्काल ही फिर आँखें खोल देती है)**

सुन्दरी—है ! मै यहाँ कहाँ ! यह कौन है ! **(अनवरुद्दीन को देखकर और एक पैर पीछे हटकर)** ओह ! पाजी ! तू ही मुझे यहाँ लाया । हे ! नीच ! कमीने ! क्या लडाई इसी का नाम है ! मेरे बाप को मार कर मुझ पर जुल्म करना चाहता है ! ओफ ! खुदा ! बचाओ ! बचाओ !!

शाइस्ताखाँ—देख ओ हुसीन लडकी ! अब पिछली बातो को भूल जा, और देख, हिन्दोस्तान के शाहशाह का सेनापति तेरे लिये आँखे बिछाने को तैयार है **(मद्य का प्याला उसकी ओर बढ़ाते हुई)** ले, इस आबेहयात को तू भी पी, मै भी पीऊँ, यह भी पिये, आसामाँ भी पिये, जमी भी पिये, सारंगी भी पिये, तबला भी पिये । **(मतवाला होकर सुन्दरी की ओर झपटता है वह घबरा कर खिड़की की ओर जाती है और वहाँ से नीचे कूद पड़ती है । सब लोग नीचे जाते है । सुन्दरी के प्राण निकल चुके है । अनरुवरुद्दीन उसे उठवाकर एक ओर चल देता है)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य छठा

समय—**प्रातःकाल** । स्थान—**पूना**

(शिवाजी के निवास गृह का बाहरी स्थान)

आबाजी सोमदेव—मित्र अभयजी! भैया शिवाजी की बात सुनी । मुरारपन्त के साथ भैया आदिलशाह के दरबार मे गए थे । न तो वहाँ उन्होने आदिलशाह को सलाम की और न ही दरबार के नियमो को कुछ समझा । दरबार से आकर कपडो सहित स्नान भी किया । बडे पक्के है भैया ?

अभयजी—मित्र ! हमारे शिवाजी, महाराज हैं ! महाराज !! वे किसी के सामने क्यों झुकें ? उनकी ओर कोई आँख उठा कर देखे तो उसकी आँख निकाल लूं । मेरी तलवार की नोक बड़ी तीखी है । ठीक है न, माधोजी !

माधोजी—तुम तो आँख निकालते फिरो; मैं उसका मुण्ड ही उतार लाऊँ । **(जाने के लिये तैयार होकर)** जाऊँ क्या !

(शिवाजी अपने गृह से बाहर आते हैं)

शिवाजी—हर हर महादेव !

तीनों—**(तलवारें हवा में घुमाकर और शिवाजी की ओर दौड़कर)** भैया, भैया, हर हर महादेव !

शिवाजी—आबाजी ! आज परीक्षा होगी । क्या सारे मावलियों को सूचना दे दी है ?

आबाजी—सूचित कर दिया है, भैया !

शिवाजी—तो आओ, दादाजी के पास चलें !

(चारों जाते हैं)
(पट-परिवर्तन)

दृश्य सातवां

(दादा कोणदेव कुटिया में खड़े हैं)

दादाजी—इस बुढ़ापे में इतना भारी पाप ! स्वामी के उद्यान में से बिना ही सूचना दिये मैंने दो केले उतार कर खा लिये ! कैसी प्रवञ्चना है ! मेरी बुद्धि को क्या हो गया । धिक् ! धिक् !! घृणा की अग्नि जलाए डालती है । आज तक मैंने एक कण की भी चोरी न की थी, एक कौड़ी भी गोलमाल न होने दी थी । आज मुझे क्या हो गया । ओह आलस्य !

तेरा नाश हो ! आज भोजन बनाने की शक्ति न थी । भूख ही सब पापों का मूल है। पर मेरा यह हाथ बड़ा कृतघ्न निकला । यह कैसे हुआ ! सब इस हाथ का अपराध है । इसे ही काट डालता हूँ । **(तलवार निकाल कर हाथ काटना चाहते हैं)**

(तीनों मित्रों सहित शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—हैं ! हैं ! दादाजी ! यह क्या अनर्थ करते हैं ? **(जाकर तलवार पकड़ लेते हैं)** दादाजी ! क्या हुआ ? अपना हाथ क्यों काटने लगे ?

दादाजी—छोड़ो छोड़ो, सरजा ! छोड़ो ! यह हाथ बहुत पापी है ! इसने ग्राज तुम्हारे उद्यान में से विना बताए दो केले उतार लिये ! इसे काट डालना ही उचित है ।

शिवाजी—बस, इतनी सी बात पर ! न दादाजी ! ऐसा करना ! ईश्वर के लिये ऐसा न करना ! मेरे दादाजी हैं तो ऐसा न करना ! क्या करने लगे थे ? हमें शस्त्र चलाना कैसे सिखलाते ? आज मुझे कुछ ऋण उतारने दीजिये । लीजिये **(अपनी अंगुली में तलवार की नोक चुभोकर और लहू निकालकर)** यह लीजिये प्रायश्चित हो गया । पाप का फल मिल गया । गुरु अथवा शिष्य ! एक ही बात है ।

दादाजी—सरजा ! तुम धन्य हो । क्या तुमने मुझे सच-मुच क्षमा कर दिया ? **(शिवाजी का सिर सूँघ कर)** मेरे सिंह ! तुम सम्राट् बनो । आओ, तुम्हारी परोक्षा लें ।

(सब का प्रस्थान)

(पटाक्षेप)

●

द्वितीय अंक

दृश्य पहला

समय—**प्रातः आठ बजे ।**

स्थान—**दादा कोणदेव की कुटिया ।**

(दादाजी बैठे हिसाब कर रहे हैं । शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—दादा जी ! प्रणाम ।

दादाजी—आओ सरजा ! बैठो । आज कितनी दूर गए थे ?

शिवाजी—केवल दस कोस जाकर लौट आए । आवाजी को घर पर शीघ्र पहुँचना था ।

दादाजी—देखो सरजा ! तुम अब बड़े हो गए हो । तुम्हारा विवाह भी हो चुका है । तुम्हें अब अपना कर्तव्य पहचानना चाहिये । मेरी इस जीर्ण देह से जागीर का सारा बोझ नही उठाया जाता, इसलिये उत्तर की ओर की जागीर का प्रबन्ध तुम्हें सौंपता हूँ । अब इधर-उधर का परिभ्रमण त्यागकर अपनी जागीर को सम्भालो ।

शिवाजी—दादाजी ! स्वीकार है । यह तो आपकी आज्ञा की देर थी, वैसे मुझे उत्तर की जागीर के सम्बन्ध में आपने सब कुछ पहले से बता ही रखा है ।

दादाजी—सरजा ! देखना, सब कार्य ठीक हों ! धैर्य, उत्साह और अपना प्रभाव कभी न छोड़ना । तुम्हारी जागीर चमक जायगी ।

शिवाजी––आपका आशीर्वाद चाहिये, मैं ऐसा ही प्रयत्न करूँगा, दादाजी !

दादाजी––अच्छा, जाओ। आज उधर की सारी भूमि भलीभाँति देख आओ।

शिवाजी––जो आज्ञा। **(प्रणाम कर जाते हैं)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य दूसरा

स्थान––**शिवाजी का निवास-गृह**

(जीजाबाई और सूईबाई 'रामायण' पढ़ रही है)

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी––माताजी ! आज दादाजी ने मुझे उत्तर की जागीर का प्रबन्ध करने की आज्ञा दी है। मैं उधर देखभाल करने जाता हूँ। आबाजी आवें तो उन्हें उधर ही भेज देना।

जीजाबाई––शिवाजी ! यह अच्छा हुआ। तुम्हें सुवर्ण अवसर मिला। **(उठकर)** ठहरो, पुत्र ! तुम्हारा तिलक कर दूं। **(झटपट केसर निकालकर घिसकर और शिवाजी के मस्तक पर लगाकर)** यह लो, तुम्हारा तिलक हो गया। तुम्हारा राजतिलक हो गया। तुम केसरी बन गए। देखना, सदा केसरी बने रहना। मैं बहुत दिनों से इसी समय की प्रतीक्षा में थी। तुम्हारे पिता, सम्भव है, इस ओर कभी ध्यान न देते। धन्य ! दादाजी ! धन्य ! तुम्हारी सूक्ष्म दृष्टि ने मेरे वीर का तिलक कर दिया। जाओ ! पुत्र ! जाओ !

आज से तुम महाराष्ट्र के तिलक बने हो। मेरा यही आशीर्वाद है।

(सूईबाई भी तिलक लगाती हैं। शिवाजी मुस्कराते हुए जाते हैं)

(पट-परिवतन)

दृश्य तीसरा

स्थान—**तोरण की ओर का विकट मार्ग**

(अश्वारूढ़ शिवाजी आते हैं)

शिवाजी—आज का दिन विचित्र है! अब तक बहुत भ्रमण किया। सारी कन्दराएँ देखी-भालीं। नदी-नाले, ग्राम-नगर सब कुछ छान मारे। किसी का भय नहीं था, कोई मार्ग रोकने वाला नहीं था। पर आज यह भार सौंपा गया है। सोचता था, मेरे जीवन का एक निश्चित उद्देश्य होना चाहिये। आज उसका प्रकाश दिखाई दिया है। जागीर का सारा प्रबन्ध धीरे-धीरे मेरे हाथों में दे दिया जायगा। पर यह जागीर तो परतन्त्र है, बीजापुर के सुल्तान के अधीन है। तब तो मेरी कुछ भी सत्ता नही! मुझे……।

('भैया, भैया,' का शब्द सुन पड़ता है, शिवाजी पीछे मुड़कर देखते है और ठहर जाते हैं। घोड़े दौड़ाते हुए आबाजी, अभयजी, माधोजी और पचास मावली नवयुवक आते हैं)

शिवाजी—हर हर महादेव!

सब—हर हर महादेव! **(पर्वत गूँज उठता है)**

आबाजी—अकेले ही क्यों चल दिये भैया ?

अभयजी—अजी, रहने भी दो 'भैया' ! अब तो 'प्रबन्धक' हैं 'प्रबन्धक' !

माधोजी—है ! 'प्रबन्धक' ! बात करनी न आती हो तो गोल सुपारी में पान रख कर खाना चाहिये । इतना बड़ा 'तिलक' हुआ और तुच्छ सा 'प्रबन्धक' शब्द ही मिला । क्या नादानी है !

शिवाजी—शीघ्रता थी, इसलिये आप लोगों को नहीं बुला सका, आबाजी ! अच्छा हुआ, आप लोग आगए ।

आबाजी—जागीर का प्रबन्ध क्या मिला, स्वतन्त्रता में बाधा आ पड़ी । इतनी क्या शीघ्रता थी ?

अभयजी—हाँ, बताओ तो ?

शिवाजी—नहीं, आबाजी ! यह स्वतन्त्रता में बाधा नहीं, यह स्वतन्त्रता की भूमिका है; अभयजी ! उस स्वतन्त्रता की, जिसके लिये महाराष्ट्र का प्रत्येक हिन्दू तड़प रहा है, बच्चा बच्चा जिसकी आशा लगाए बैठा है । हमारी स्वतन्त्रता में पशु-पक्षी तक आनन्द से विचर सकेंगे । **(कुछ ठहर कर)** ऐसा शुभ अवसर फिर कब मिलेगा ! आओ वीरो ! आज ही स्वाधीनता का प्रण कर लें । मावली वीरो ! आप सब घेरा डालें । आबाजी ! आप मेरे सामने ठहरें । अभयजी और माधोजी दाएँ-बाएँ रहेंगे ।

(सब मावली घेरा डाल लेते हैं । आबाजी सामने ठहरते हैं)

माधोजी—**(अभयजी को बाईं ओर धकेल कर)** आओ जी ! तुम बाईं ओर । दाईं ओर मैं रहूँगा, मैं ! **(मूंछों के**

खाली स्थान पर हाथ फेरता है)

शिवाजी—(**तलवार निकाल कर और आकाश में घुमा कर**) मै आप सब के सम्मुख प्रण करता हूँ कि आज से मातृ-भूमि की स्वाधीनता ही मेरे जीवन का उद्देश्य है।

आबाजी—(**तलवार आकाश मे घुमाकर**) मै भैया शिवाजी और आप भाइयो के सामने प्रण करता हूँ कि आज से मातृभूमि की स्वाधीनता ही मेरे जीवन का उद्देश्य है और मै जन्मभर भैयाजी की सेवा में रहूँगा।

अभयजी—(**तलवार आकाश मे घुमाकर**) मै भैया शिवाजी और आप भाइयो के सामने प्रण करता हूँ कि आज से मातृभूमि की स्वाधीनता ही मेरे जीवन का उद्देश्य है और मै देश के लिये, भैया शिवाजी के लिये, धर्म के लिये मर मिटूँगा।

शिवाजी—न, प्यारे अभयजी ! ऐसा न कहो। 'मर मिटना' हमारा उद्देश्य नही। हमारा उद्देश्य 'मार मिटाना' है। पहले से ही 'मर मिटना' उद्देश्य बना लिया तो सफलता कैसे होगी ! हाँ, मरने से डरना नही चाहिये।

माधोजी—(**तलवार आकाश में घुमाकर**) मै भैया शिवाजी और आप भाइयों के सामने प्रण करता हूँ कि आज से मातृभूमि की स्वाधीनता ही मेरे जीवन का उद्देश्य है और मैं देश के लिये, भैया शिवाजी के लिये, धर्म के लिये यवनों को मार मिटाऊँगा। सरजा शिवाजी की जय !

सब—सरजा शिवाजी की जय !

(सब मावली इकट्ठे प्रण करते हैं)

शिवाजी—अब ठीक है चलिये, तोरण देख आवें।

(सब घोड़े दौड़ा कर जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य चौथा

समय—**दोपहर**। स्थान—**बीजापुर**

(अली आदिलशाह का दरबार लगा हुआ है)

आदिलशाह—अब्बाजान के आँखें मूंदते ही कर्नाटक में तूफान मच गया है ! शाहजी ! आपके सिवाय और कोई भी उन तेज-मिजाज लोगों को काबू नहीं कर सकता; इसलिए आप आज ही कर्नाटक की तैयारी कर लें। क्यों ? पन्तजी !

मुरारपन्त—हाँ, जनाब ! शाहजी का उन लोगों पर बड़ा प्रभाव पड़ा है। पिछले वर्ष भी जब कर्नाटक के लोगों ने विद्रोह कर दिया था, तब शाहजी ने ही जाकर शान्ति स्थापित की थी। यह किसी और के वश का नहीं। आपके पिता जी भी शाहजी को बहुत मानते थे।

अफजलखाँ—(**खिझकर**) वाह जनाब ! ये गाजर-मूली कर्नाटक के लोग मेरे सामने क्या चीज हैं। इन्हें सीधे रास्ते पर लाना मेरे बाएँ हाथ का खेल है। बादशाह सलामत के एक इशारे की देर है।

आदिलशाह—नहीं, खाँ साहब ! कर्नाटक तुम्हारे बस का नहीं। यह ठीक है कि तुम बड़े भारी सिपहसालार हो, लोग तुम्हारा नाम सुनकर काँपते हैं; पर कर्नाटक की और ही बात

है, वहाँ शाहजी का ही काम है।

शाहजी—महाराज ! जैसी आपकी आज्ञा। पर यदि खाँ साहब जाना चाहें तो इस बार इन्हें ही भेज दिया जाय !

आदिलशाह—शाहजी ! नाराज न हों। आप कर्नाटक के लिए आज ही चल पड़ें। कैसी-कैसी खबरें आ रही हैं !

शाहजी—शिरोधार्य है। आपकी कृपा का अभारी हूँ। आज ही कर्नाटक जाता हूँ। (**अभिवादन कर जाते हैं**)

(**पट-परिवर्तन**)

दृश्य पांचवां

(**एक पहाड़ी पर अभयजी और माधोजी बैठे हैं**)

अभयजी—देखा, माधोजी ! भैया शिवाजी·······

माधोजी—(**बीच ही में काटकर**) फिर वही बात ! तुम्हें जो एक बार समझाया कि 'भैया शिवाजी' कहना छोड़ दो। अब 'महाराज शिवाजी' कहोगे तो बात सुनूगा !

अभयजी—तो, देखा ! महाराज शिवाजी का कितना प्रभाव है ? उनकी भौ के हिलते ही सैकड़ों वीरों की तलवारें निकल आती हैं। उन्होंने सोचा कि कोई-न-कोई किला अवश्य अपने पास होना चाहिए। बस, 'तोरण' किले के अध्यक्ष को महाराज ने किला देने पर राजी कर लिया और अब 'तोरण' हमारे महाराज के अधिकार में है।

माधोजी—अजी ! मुझे क्या सुनाते हो ? मैं तो उस समय उनके साथ ही था और अब वहाँ खण्डहर की खुदाई

आरम्भ है। बड़ी भारी धन-राशि निकलने की सम्भावना है।

अभयजी—सच ! मुझे तो पता ही नहीं। तब तो हमारे भैया·····न न, हमारे महाराज बड़े धनी बन जायँगे !

माधोजी—पहले कौनसे निर्धन हैं ? तुम अभी निरे बालक हो; तभी मर मिटने को उद्यत थे। अजी ! अब युद्ध होंगे, किले हाथ आएँगे, धन की प्राप्ति होगी, सेना बढ़ेगी, राज्य अपना होगा। न जाने क्या-क्या होगा ! कुछ समझ से काम लो। प्रातःकाल उठकर पानी पिया करो।

(दोनों जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य छठा

समय—**तीसरा पहर**। स्थान—**तोरण दुर्ग**

(शिवाजी का दरबार सजा है)

शिवाजी—तानाजी ! खण्डहरों में प्राप्त सारा धन कोषाध्यक्ष को देकर आदिलशाह के दरबार में जाओ और हमारी ओर से यह प्रकट करो कि हमने तोरण-दुर्ग केवल सुलतान की सेवा के लिये ही लिया है, इसलिये सुलतान का इसमें लाभ ही है। एक तो उसे मुगलों का डर नहीं रहेगा, दूसरे हम कर भी पहले से दुगना देंगे। देखना, काम सावधानी से होना चाहिये।

तानाजी—जो आज्ञा, महाराज ! **(नमस्कार करके जाता है)**

शिवाजी—शेलार मामाजी ! आप सूर्याजी को साथ लेकर

महोविदा की पहाड़ी पर चलें, किला तैयार होने पर हमें सूचित करना। हमने उसका नाम 'रायगढ़' रक्खा है।

शेलार मामा—जैसी महाराज की आज्ञा। **(दोनों अभिवादन करके जाते हैं)**

शिवाजी—आबाजी! आप 'कल्याण' की ओर जाकर भेद लेते रहो और माधोजी को भी साथ लेते जाओ।

आबाजी—महाराज की आज्ञा शिरोधार्य है। **(नमस्कार कर जाने लगता है)**

माधोजी—महाराज! आपकी आज्ञा सिर-माथे। मैं आबाजी को साथ लेकर अभी 'कल्याण' की ओर जाता हूँ! **(नमस्कार कर जाता है)**

शिवाजी—रघुबल्लाल जी! आप आज सारे मावली-सिपाहियों की शस्त्र-परीक्षा लो और मैं पूना जाता हूँ। न जाने, दादाजी का स्वास्थ्य कैसा हो! **(चिन्तित होकर जाते हैं)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य सातवां

(दिल्ली में शाहजहां का दरबार लगा हुआ है)

शाहजहाँ—प्यारे औरंगजेब! दक्खन की पहेली अभी तक नहीं सुलझ सकी। दक्खन में इस समय बीजापुर ही एक ऐसी शक्ति है जो सिर उठाए हुए है। किसी प्रकार बीजापुर के सुलतान को वश में करना चाहिए।

औरंगजेब——आपके हुक्म की देर है, जहाँपनाह ! बीजापुर का एक सुलतान क्या, सैंकड़ों सुलतानों को नाकों चने चबवा सकता हूँ ! इससे पहले गोलकुण्डा को जीत ही चुका हूँ !

शाहजहाँ——तो फिर बीस हजार की फौज लेकर जल्दी ही दक्खन की ओर कूच कर देना चाहिये। साथ में मीरजुमला को भी ले जाओ, इन्हें दक्खन की अच्छी जानकारी है।

औरंगजेब——बहुत खूब, जहाँपनाह।

(औरंगजेब और मीरजुमला सिंहासन चूमकर जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य आठवां

(तोरण-दुर्ग में शिवाजी का दरबार लगा है)

शिवाजी——अभी तक बीजापुर की कोई सूचना नहीं मिली। तानाजी अभी तक आए नही।

(तानाजी मूलसरे का प्रवेश)

तानाजी——**(प्रणाम करके)** महाराज ! सुलतान ने यह पत्र दिया है। **(पत्र देता है)**

(शिवाजी पत्र खोलकर पढ़ते हैं। पढ़कर)

शिवाजी——बहुत ठीक किया, तानाजी ! सुलतान अप्रसन्न नहीं हुआ। लिखता है कि आगे से बिना आज्ञा लिये कोई कार्य न करना और कर ठीक समय पर देते रहना। यह तो हुआ। अब इस किले में कुछ युद्ध की सामग्री इकट्ठी करनी होगी। रघु-बल्लालजी ! परसों तक यह कार्य हो जाना चाहिये, यह भार

आप पर है। तानाजी ! उस धनराशि का चिट्ठा शीघ्र तैयार करलो। रायगढ के लिये खर्च की आवश्यकता होगी।

(रघुबल्लाल और तानाजी प्रणाम कर जाते हैं)

शिवाजी—अभयजी ! हम इसी समय पूना जाते हैं। कोई आवश्यक बात हो तो वही सूचना भिजवा देना। **(जाते हैं)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य नौवां

स्थान—दादा कोणदेव की कुटिया

(दादाजी पत्र पढ़ रहे हैं, एक दूत पास खड़ा है)

दादाजी—यह बात है ! हूँ। **(दूत से)** लो भई, बैठो, कुछ जलपान करलो। अभी उत्तर लिखे देता हूँ।

दूत—नही, दादाजी।

दादाजी—अजी। बैठो भी ! तुम कोई भिन्न थोड़े ही हो। शाहजी तुम्हारे स्वामी है और हमारे भी। यह सब कुछ उन्ही का है। **(उठकर जलपान लाकर दूत के सामने रखते हैं)**

दूत—**(बैठकर खाते-खाते)** शिवाजी आजकल कहाँ हैं ?

दादाजी—सम्भवतः तोरण-दुर्ग में होंगे।

(गंगू का प्रवेश)

गंगू—दादाजी ! प्रणाम। आज स्वास्थ्य कैसा है ? भाबी-जी आपके स्वास्थ्य के लिये बहुत चिन्तित है।

दादाजी—कुछ ठीक हूँ, गगू ! पर अब इस देह में शक्ति नही रही। क्या शिवाजी घर पर थे ?

गंगू——नहीं, दादाजी ! तोरण-दुर्ग से अभी तक आए नहीं, आते ही होंगे ।

दादाजी——देख तो, कदाचित् आगए हों ! उनसे कहना, जरा दादाजी बुलाते हैं । कर्नाटक से दूत आया है, बहुत आवश्यक कार्य है ।

गंगू—जो आज्ञा । **(जाता है)**

दादाजी——**(पत्र लिखते-लिखते दूत से)** वे अभी और कितने दिन कर्नाटक में रहेंगे ?

दूत——जब तक उपद्रव भली प्रकार शान्त न हो जाय । स्वामी को छोड़ कर और किसी में उतनी सामर्थ्य है ही नहीं । **(दूत जलपान समाप्त करता है)**

दादाजी—**(पत्र समाप्त कर के दूत से)** यह लो पत्र । शाहजी से इतना और निवेदन कर देना कि कोणदेव इस लोक में अब थोड़े दिनों का अतिथि है । मेरे पीछे शिवाजी पर कोई आँच न आने पावे ।

दूत—अवश्य निवेदन कर दूंगा । अब आज्ञा दीजिये **(अभिवादन करके जाता है)**

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—प्रणाम दादाजी ! क्या आज्ञा है ? मैं अभी-अभी तोरण-दुर्ग से आया था । बाहर द्वार पर ही गंगू ने आपका सन्देश दिया । स्वास्थ्य तो ठीक है ?

दादाजी——हाँ, सरजा ! स्वास्थ्य कुछ ठीक ही है । **(पत्र देकर)** यह देखो, तुम्हारे पिता जी ने क्या लिखा है ? तुम्हें चंचलता छोड़ देनी चाहिये । सुलतान से शत्रुता अच्छी नहीं ।

शिवाजी—(**पत्र लेकर और पढ़कर**) वे तो इसी प्रकार लिखेंगे; सुलतान के सेवक जो हुए ! सुलतान ने उन्हें प्रेरित किया होगा। पर दादाजी ! बिना किला लिये काम कैसे चल सकता था ? कब तक हम इस प्रकार दबे रहें ? किले के खण्डहरों में से जितना धन प्राप्त हुआ है, उतना तो हमें वर्षों में भी कठिनता से मिलता। फिर भी पूज्य पिताजी की और आपकी आज्ञा से बढ़ कर मेरे लिये कुछ नहीं है। पिताजी जो उचित समझें, आपकी जो सम्मति हो, मैं वही करूँगा।

दादाजी—वीर ! तुम धन्य हो। तुम्हारा साक्षात्कार करके, तुमसे वार्तालाप करके मेरा हृदय आह्लादित हो उठता है। आज्ञा-पालन में तुम राम हो। मेरा इतना आदर कभी किसी ने नहीं किया। मेरा एक पुत्र था, उसकी सोलह वर्ष की अवस्था में मृत्यु हो गई। मेरी एक आत्मा है और वह तुम हो। सरजा ! तुम ऐश्वर्य और सुख को चिरकाल तक भोगो। जाओ, इस समय घर पर प्रतीक्षा हो रही होगी। शाहजी के पत्र का जरा ध्यान रखना।

शिवाजी—जाता हूँ, दादाजी ! माताजी और देवीजी से भी मन्त्रणा करूँगा। (**प्रणाम कर जाते हैं**)

दादाजी—जाओ वीर, जाओ ! तुम जैसा नेता पाकर स्वाधीनता का यज्ञ पूर्ण होगा। तोरण-दुर्ग ले लिया; लेना ही चाहिये था। इस दुर्ग का अनायास ही प्राप्त हो जाना सफलता की प्रस्तावना है। शाहजी मेरे स्वामी हैं, मैं उनका हूँ; इसलिये शिवाजी को कहना पड़ा। पर शिवाजी ने कुछ बुरा नहीं किया। क्या किया जाय ? एक ओर स्वामी का अनुशासन है,

दूसरी ओर कर्तव्य की पुकार है। (**कुछ सोचकर**) यही ठीक रहेगा। (**शय्या पर लेट जाते हैं**)

(**पट-परिवर्तन**)

दृश्य दसवां

स्थान—**शिवाजी का निवासगृह**।

(**सूईबाई बैठी है**)

सूईबाई—पतिदेव की सेवा करने का अवसर ही नहीं मिलता। कभी वे यहाँ होते हैं, कभी वहाँ। स्वाधीनता की अग्नि धधक उठी है। देखें क्या परिणाम निकलता है? कहीं वे उदासीन न हो जाएँ? पर नहीं, ऐसा नहीं हो सकता। सूईबाई के जीते जी उनमें यह अग्नि शान्त न होने पायगी, उनमें कभी भी शिथिलता न आ सकेगी। क्षत्रियों का जीवन इस कार्य के लिये होता है।

(**शिवाजी का प्रवेश**)

सूईबाई—(**उठकर और प्रणाम करके**) प्राणनाथ! भूल ही गए? कभी तो दर्शन दे दिया करो। क्या मातृभूमि का प्रेम अपनी अर्धाङ्गिनी से मिलने नहीं देता? तब तो मेरी कुछ भी आवश्यकता नहीं। (**आँखों में आँसू आ जाते हैं**)

शिवाजी—देवीजी! ऐसा न कहो। तुम मेरे हृदय की अधिष्ठात्री देवी हो। मैं शरीर हूँ, तुम प्राण हो। तुम्हें कैसे भूल सकता हूँ? मातृभूमि की सेवा के लिये मुझे तुमसे प्रोत्साहन ही मिलेगा। इन दिनों कार्य ही ऐसे आ पड़े हैं, एक पल भी

विश्राम करने को नहीं मिला। माताजी कहाँ हैं ?

सूईबाई--माताजी उस पुराने मन्दिर की ओर गई हुई हैं।

(शिवाजी बैठते हैं। सूईबाई भी बैठती है)

शिवाजी--प्रिये ! हमारा तोरण-दुर्ग लेना सुलतान को बहुत बुरा लगा। उसने पिताजी को कर्नाटक पत्र लिखा। पिताजी ने दादाजी को लिख भेजा है कि शिवाजी को समझा दो, वह आगे से ऐसा न करे; सुलतान से वैर लेना ठीक नहीं। दादाजी ने बुलाकर मुझे यही कहा था। तुम्हारी क्या सम्मति है ?

सूईबाई—स्वामिन् ! मैं स्त्री हूँ, इस प्रकार के झगड़ों को उतना नहीं समझ सकती, जितना आप। फिर भी स्वाधीनता के उपासक की सहधर्मिणी हूँ। यद्यपि बड़े बूढ़ों की आज्ञा सर्वदा मान्य होती है, उनकी इच्छा के विरुद्ध कभी भी कोई कार्य नहीं करना चाहिये और पिता की आज्ञा तो पूर्णतः शिरोधार्य होती है; फिर भी देश का भी कुछ ऋण होता है, मातृभूमि की भी कोई साध होती है, दीनों की भी कोई पुकार होती है। उत्पीड़ित जीवों का करुण-क्रन्दन उस स्वामी का शब्द है, जो पिता से भी बढ़ कर है, जो सब का पिता है, सब का अधिष्ठाता है। उसकी आज्ञा के सामने सब आज्ञाएँ अकिंचन हैं। गौ, ब्राह्मण, स्त्रीजाति और धर्म की रक्षा के लिये पिता की आज्ञा का उल्लंघन भी करना पड़े तो घबराना नहीं चाहिये। वे दूर कर्नाटक में हैं। उन्हें यहाँ के अत्याचारों का पता नहीं। यदि वे यहाँ होते तो आपको कभी भी मना न करते, अपितु आपको इस कार्य के लिये

सहायता देते ।

शिवाजी—प्राणाधिके ! तुम धन्य हो। तुम वीरबाला हो। तुमने उचित ही कहा है। मैंने पहले ही कहा था कि मुझे तुमसे प्रोत्साहन मिलेगा। अब मुझे अपना मार्ग स्वयं देखना होगा। स्वतन्त्रता के पथ में इस प्रकार की दुर्गम घाटियाँ आया ही करती हैं। अपने ही जन आगे बढ़ते हुए को पीछे की ओर खींचा करते हैं। सदा अपनों से ही उच्च अभिलाषाओं का किला टूटा करता है। अब कुछ ध्यान न दूंगा। माताजी से भी सम्मति ले लेनी चाहिये।

(पट परिवर्तन)

●

तृतीय अंक

दृश्य पहला

समय—**सायंकाल ।**

स्थान—**दादाजी की कुटिया ।**

(दादाजी शय्या पर पड़े है । पास ही शिवाजी, जीजाबाई, सूईबाई और गंगू बैठे है)

दादाजी—(**करवट बदलकर**) सरजा तुम आ गए ! अच्छा किया । जीजाबाई और सूईबाई भी आ गई ! ठीक है । शिवाजी ! मेरा अन्त समीप है । मैने अपनी इच्छानुसार तुम्हारी पालना की है । जागीर का कण-कण तुम्हें बना दिया है । युद्ध-विद्या में तुम निपुण हो गए हो । मेरे सामने ही तुमने तोरण-दुर्ग ले लिया है और रायगढ़ बनवा लिया है । मेरी कामनाएँ फूलने-फलने लगी है । मैने उस दिन तुम्हे कुछ कहा हो तो क्षमा करना । सरजा ! तुम्हारे पिता ने तुम्हे जिस उत्तम कार्य से रोकना चाहा था उसे मत छोड़ना, पुत्र ! थोड़ा-सा जल । (**शिवाजी झट से जल का कटोरा लाकर दादाजी को कुछ उठाकर पिलाते है और फिर लिटा देते है**) हाँ, कर्तव्य-पथ का कभी भी त्याग न करना, मेरे सिंह ! गौ, ब्राह्मण, स्त्रीजाति, धर्म, धर्म-ग्रन्थ, संन्यासी—इन सब का सदा सम्मान करना, इनकी सब प्रकार से रक्षा करना । स्वाधीन होकर जीना । परतन्त्रता से बढ़कर कोई पाप नहीं । पराई भाषा, पराई संस्कृति, पराया

राज्य विष-तुल्य हैं, इनसे सदा घृणा करना। उस दिन की बात भूल जाओ, वीर! सर्वथा भूल जाओ उस दिन मैं कर्तव्य-भ्रष्ट हुआ था। मैं कहता हूँ और मुझे आशा है कि तुम अपने दादा की आत्मा को अवश्य पहचानोगे, उसे निराश न करोगे। **(लम्बे-लम्बे साँस लेते हैं)**

शिवाजी—**(आँखों में अश्रु लाकर और चरणों में सिर रखकर)** मेरे प्रभु! दादाजी! ऐसा न कहो। मुझे उस दिन कुछ भी बुरा नहीं लगा। आप सदा उचित शिक्षा देते हैं। आपकी गोद में ही यह शरीर पला है। यह आपका है। आपके लिए यह उपस्थित है। आप इससे जो चाहें काम ले सकते हैं। मैं तो पहले ही जानता था कि आपकी आत्मा क्या कहती है। अपने दादाजी की इच्छा को मैं भली-भाँति पहचानता हूँ। आपकी अभिलाषा, आपकी आज्ञा अक्षरशः पूर्ण होगी। मुझे आशीर्वाद दीजिए। **(दादाजी की पीठ पर हाथ रखकर)** आपकी यह अवस्था देखकर मेरा कालेजा मुँह को आता है। प्रभु रक्षा करें। **(शिवाजी सीधे बैठ जाते हैं)**

दादाजी—**(खाँसकर)** देखो सरजा! मेरी पुरानी शिक्षाओं को याद रखना। पुत्रवर! सत्य की ठीक-ठीक पहचान करना। माताजी की आज्ञा में रहना। अपनी भलाई की बात में प्रमाद करने से परिणाम बुरा होता है। भृत्यों से सावधान रहना। अपने सेवकों को धन आदि से सन्तुष्ट रखना। मूढ़ मनुष्य बाहर के विषय-भोगों में पड़कर मृत्युजाल में फंस जाते हैं; परन्तु मेधावान् पुरुष अनित्य विषय-सुख की कामना कभी नहीं करते; इसलिए आचरण की महत्ता को पह-

चान कर अपने जीवन को उच्च बनाना। तुम सब कुछ समझते हो। देखना, स्वाधीनता-पथ के असफल यात्री न बनना। मेरी यही शिक्षा है, यही आशा है, यही अभिलाषा है, यही कामना है। **(कुछ रुककर)** अधीर न हो, सरजा! बहन जीजाबाई! पुत्री सूईबाई! दुःख न करना। मै बिछुड़ता हूँ। घबराना मत। जगदीश पर विश्वास रखो, तुम्हारे मनोरथ सफल होगे। ज·····ल··· **(शिवाजी मुँह मे जल डालते है। दादाजी क्रमशः क्षीण हो जाते है। सब की आँखों मे आँसू आ जाते है और सब सिर झुका लेते है)**

[पट-परिवर्तन]

दूसरा दृश्य

समय—**सायंकाल**। स्थान—**तोरण-दुर्ग**।

[अभयजी किले की दीवार पर बैठा है]

अभयजी—**(गाता है)**

तैलग

शिवाजी सरजा की क्या बात।
चैन नहीं पल भर को मिलती टेढ़ी तिरछी घात॥
घोर नदी-नद पार पार जा, कर अरि पर आघात।
अश्वारोहन, गिरि-वन लंघन, दौड़-धूप दिन रात॥
गढ़ ले लेने, नए बनाने, धन-सम्पद-आयात।
सिह शिवाजी की जय जय हो महाराष्ट्र की प्रात॥

महाराज की वाणी में इतना मधु है कि पराया भी झट अपना हो जाता है। उनकी विचार-शक्ति इतनी तीव्र है कि जिस कार्य में हाथ डालते हैं वही सफल होकर रहता है। शत्रुओं के दुर्गाध्यक्षों को अपने साथ मिला लेना महाराज के लिए एक खेल-सा है। इस जागीर के सारे दुर्ग हाथ में आगए तो सुलतान से अच्छी टक्कर होगी। (**नीचे देखकर**) यह अश्वारोही कौन है ? (**झटपट किले के द्वार की ओर जाता है**)

अश्वारोही—छत्रपति शिवाजी की जय !

अभयजी—तुम कौन हो ? किससे मिलना है ?

अश्वारोही—(**गुप्त चिन्ह दिखाकर**) महाराज से मिलना है।

अभयजी—भीतर आ जाओ। उस सामने के गृह में थोड़ी देर विश्राम करो। महाराज आते ही होंगे।

(**अश्वारोही जाता है। अभयजी दरबार में आ जाता है**)

अभयजी—महाराज के बिना इस दुर्ग की शोभा इस प्रकार फीकी पड़ जाती हैं जैसे चन्द्रमा के बिना रात्रि की।

(**दरबार में शिवाजी का प्रवेश। हर हर महादेव की ध्वनि। सब अभिवादन करते हैं**)

शिवाजी—(**आसन पर बैठकर**) अभयजी ! दादाजी परलोक सिधारे। अब हमारा शिक्षक, हमारा मार्ग-दर्शक नहीं रहा। इतना शीघ्र उनका प्राणान्त हो जायगा, इसका पता न था।

अभयजी—(आँसू बहाते हुए) महाराज मुझे भी

उनके अन्तिम दर्शन करने का अवसर मिल जाता तो अच्छा था।

शिवाजी—इधर और कोई होता तो मैं तुम्हें अवश्य बुला लेता। अभयजी! चाकन के दुर्गाध्यक्ष फिरंगाजी नरसले माना कि नहीं? सम्भाजी मोहते ने अपना हठ छोड़ा है या नहीं?

अभयजी—महाराज! फिरंगाजी तो मान गया है और इस समय चाकन-दुर्ग महाराज के अधिकार में है; किन्तु सम्भाजी मोहते किसी प्रकार भी हठ नहीं छोड़ता।

शिवाजी—उसे हठ छोड़ना होगा, अभयजी! उसे हिसाब चुकाना होगा।

अभयजी—महाराज! एक गुप्तचर आया हुआ है।

शिवाजी—उसे शीघ्र ले आओ, अभयजी।

(अभयजी जाता है और गुप्तचर सहित आता है)

शिवाजी—कहो, रिपुदमन! गोंदवाने के यवन की क्या दशा है?

रिपुदमन—महाराज! वह लोभी यवन पाँच हजार लेकर मान गया है। आज आपकी सेवा में उपस्थित हो जायगा। गोंदवाना-दुर्ग अब महाराज के अधिकार में है।

शिवाजी—धन्य, धन्य! रिपुदमन! तुम अपने कर्तव्य को बहुत योग्यता से निभाते हो। तुम्हें इसका पुरस्कार मिलेगा। जाओ, अब जिस प्रकार भी हो पुरन्दर के दुर्गाध्यक्ष को मना लो। वह भी यवन है। ये यवन बड़े लोभी होते हैं।

(गुप्तचर अभिवादन करके जाता है)

शिवाजी--अभयजी ! सम्भाजी मोहते तो पिता जी का सेवक है, तब भी नहीं मानता। वह यों मानने वाला नहीं; लातों के भूत बातों से नहीं मानते। **(कान में कुछ कहते हैं)** जाओ, अभयजी ! शीघ्रता करो।

(अभयजी जाता)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य तीसरा

समय--**प्रातःकाल**। स्थान—**कल्याण-दुर्ग से दो कोस दक्षिण की ओर**

(एक वृक्ष के नीचे आबाजी सोमदेव टहल रहा है। थोड़ी देर बाद माधोजी का प्रवेश)

आबाजी सोमदेव—माधोजी ! कहो, क्या समाचार लाए ?

माधोजी—बहुत लाभदायक समाचार है। मदान्ध मुल्ला अहमद बिलकुल असावधान है,चाहे सिरकाट लो।आज ही वह बहुत-सा धन बिहार की ओर भेजेगा; पर वह सारा धन रायगढ़ जाने को उत्सुक है, बिहार की ओर जाने की उसकी इच्छा नहीं, मैंने सूंघकर देखा है।

आबाजी--**(मुस्करा कर)** तब तो ठीक है **(उच्च स्वर से 'ओ३म्' कहता है। दूर से पांच अश्वारोही आते हैं)**

आबाजी—**(एक अश्वारोही से)** थोड़ी देर में उत्तर-पूर्व वाले मार्ग पर २०० मावली पहुँच जाने चाहियें। जाओ,

शीघ्रता करो ।

(अश्वारोही जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य चौथा

समय—**दोपहर** । स्थान—**दक्षिण में औरंगजेब की छावनी**

(औरंगजेब एक उच्चासन पर बैठा है । सामने मीरजुमला बैठा है)

औरंगजेब—अली आदिलशाह ने सुलह के लिए कहा है। तुम्हारी क्या सलाह है, मीरजुमला ?

मीरजुमला—मेरे ख्याल में तो सुलह कर लेनी ही ठीक है, शाहजादा साहब ! इस मुसलमान सुलतान की फौज के हिन्दू सिपाही बड़े लड़ाके हैं ।

औरंगजेब—नहीं, मीरजुमला ! सुलह ठीक नहीं । इस वक्त हमने जरा सी भी सख्ती दिखाई तो वह जरूर ही मुगल-बादशाह के आधीन होना मंजूर कर लेगा ।

मीरजुमला—यह भी ठीक । तो हमें कल बड़े जोर-शोर से चढ़ाई कर देनी चाहिये ।

औरंगजेब— मीरजुमला ! सच-सच बतलाना । हम चारों भाइयों में से तुम्हें कौन अच्छा लगता है ? तुम गद्दी के लायक किसे समझते हो ?

मीरजुमला—**(कुछ सोचकर)** बड़े-छोटे के ख्याल से तो दारा का हक़ है, मगर अच्छे आप ही हैं । आप ही गद्दी पर

बैठने लायक हैं। मुराद गुजरात में है और शुजा बंगाल में है। पर शाहजहाँ की दारा पर बहुत मुहब्बत है। मुगल-राज्य के हिन्दू सिपाहसालार और ओहदेदार भी दारा को ही चाहते हैं। यशवन्तसिंह भी उसी के तरफदार हैं।

औरंगजेब—तुम ठीक कहते हो, मीरजुमला। पर मैंने भी कोई कच्चा दूध नहीं पिया। मैं इस्लाम का पक्का हामी हूँ। सच्चा मुसलमान मेरा साथ देगा। देखना, मीरजुमला! तुम्हारी दुआ से मैं कैसी कड़ी घुमाता हूँ। **(एक दूत का प्रवेश औरंगजेब माला जपने लगता है)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य पांचवां

समय—**दोपहर**। स्थान—**रायगढ़**।

(शिवाजी का दरबार लगा है)

शिवाजी—तानाजी! गोंदवाना-दुर्ग रिपुदमन के प्रयत्न से हमारे अधिकार में आगया है। रिपुदमन को २०० मुद्रा पारितोषक दे दो और यह घोषित कर दो कि गोंदवाना-दुर्ग का नाम आज से 'सिंहगढ़' रक्खा जाता है। सिंहगढ़ का प्रबन्ध शेलार मामा जी करेंगे।

तानाजी—जो आज्ञा, महाराज।

शेलार मामा—**(उठकर)** आपकी आज्ञा शिरोधार्य है।

शिवाजी—रात सम्भाजी मोहते को जीतने के लिए जो सौ मावली मेरे साथ थे, उनमें से प्रत्येक को बीस-बीस मुद्रा

पारितोषिक दिया जाय और जो एक मावली मारा गया था उसके परिवार को बीस मुद्रा मासिक वृत्ति दी जाय। मुझे उसके परिवार से बहुत अधिक सहानुभूति है।

तानाजी––ऐसा ही होगा, महाराज !

शिवाजी––सम्भाजी मोहते को कर्नाटक पिताजी के पास भेज दिया जाय और उसके सिपाहियों में से जो-जो प्रतिज्ञा करके हमारी सेना में प्रविष्ट होना चाहे उसे रख लिया जाय। शेष सिपाहियों को मुक्त कर दिया जाय।

तानाजी––सूर्यजी ! आइये, यह कार्य पूर्ण कर दें।

(दोनों जाते हैं)

शिवाजी––शेलार मामाजी ! कल्याण का कोई समाचार मिला ?

शेलार मामा––एक दूत अभी अभी आया है, वह शीघ्र ही आपकी सेवा में उपस्थित होगा।

शिवाजी––तो आप सिंहगढ़ जाइये और सब प्रकार की सूचनाएँ प्रतिदिन भिजवाते रहिये।

शेलारमामा––**(अभिवादन करके जाते हैं)**

(दूत का प्रवेश)

दूत––**(प्रणाम करके)** महाराज की जय हो। मुल्ला अहमद एक बड़ी धनराशि बिहार भेज रहा था। आबाजी ने उसे मार्ग में ही लूट लिया और मुल्ला अहमद को वन्दी भी कर लिया। उसके पश्चात् कई गढ़पति भेंट ले लेकर आबाजी के पास आचुके हैं। अब एक प्रकार से सारे कल्याण प्रान्त पर आपका अधिकार है।

शिवाजी—उत्तम समाचार सुनाया, कृष्ण जी ! कल्याण का प्रबन्ध आबाजी भली भाँति कर सकेंगे । **(उठकर)** इसी समय कल्याण चलना चाहिये ।

(तेजी से जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य छठा

समय—**दोपहर** । स्थान—**बीजापुर** ।

(अली आदिलशाह का दरबार लगा है)

आदिलशाह—इधर शाहजी के पुत्र ने नाक में दम कर रखा है; उधर मुगलों ने बीजापुर की ईंट-से-ईंट बजा दी है। दम भर को चैन नहीं ।

(एक दूत का प्रवेश)

दूत—**(झुककर)** बादशाह सलामत ! गोंदवाना और चाकन शिवाजी ने अधिकार में कर लिये हैं ।

आदिलशाह–अफजलखाँ ! यह कैसी जलाने वाली खबर है !

अफजलखां—देखा जनाब ! अपने सिपाहसालार के लड़के की करतूत । क्या इसीलिए आप शाहजी को इतना रुतबा देते है ? इसमें शाहजी का हाथ जरूर है ।

मुरारपन्त—नहीं जनाब ! शिवाजी अपने पिता की अनुमति के बिना ही ऐसा कर रहा है । इसमें शाहजी का कुछ भी अपराध नहीं ।

(दूसरे दूत का प्रवेश)

दूत—**(झुककर)** परवरदिगार ! कंगोरी, टागटकोन,

भोरप, कादरी, लोगढ़ और राजमोची दुर्ग शिवाजी ने जीत लिये हैं। गौशाला और राइरी नामक गाँवों पर भी उसने अधिकार कर लिया है। अब वहाँ किले बनाए जा रहे हैं।

आदिलशाह--(**अफजलखां के कन्धे पर हाथ रखकर**) मेरे सच्चे भाई ! मुझे भलाई नहीं दिखाई देती।

अफजलखां--और लीजिये। क्या मैं झूठ कहता था ? अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। (**धीरे से कुछ कहता है**) उसकी दवा यही है।

(**मुल्ला अहमद का प्रवेश**)

मुल्ला अहमद--(**झुककर**) गजब हो गया, जहाँपनाह। शिवाजी मनुष्य नहीं, एक आफत है ! उसके नायक ने सारा खजाना लूट लिया और मुझे कैद भी कर लिया। पता नहीं उसके पास कितने सिपाही हैं। पर है बड़ा मिलनसार और दबदबे वाला। उसका स्वभाव बड़ा अच्छा है। मुझे इज्जत के साथ रिहा कर दिया। नायक को कल्याण का सूबेदार बना कर आप शायद पूना लौट गया।

आदिलशाह--उफ़ ! आफत पर आफत ! हमारी बादशाहत का पता नहीं क्या हो ? (**अचेत होता है। अफजलखां हवा करता है**)

आदिलशाह--(**सचेत होकर**) ठीक, अफजलखां तुम ठीक कहते हो। (**धीरे से कुछ कहता है**)

(**पट-परिवर्तन**)

दृश्य सातवां

समय—**सायंकाल** । स्थान—**रायगढ़** ।

(एक मन्दिर के आँगन में भूषण कवि कुछ लिख रहा है)

भूषण—**(अंगड़ाई लेकर)** अब ठीक कविता बन गई। सुना है महारज शिवाजी बड़े गठे हुए हैं।

(साधारण सिपाही के वेश में शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—**(स्वगत)** इन यवनों का कुछ पता नहीं। बड़ा धोखा देते हैं। इनसे सदा सावधान रहना चाहिए। **(सामने देखकर गम्भीरता और रोब से)** क्यों भाई ! तुम कौन हो ? यहाँ क्या कर रहे हो ?

भूषण—**(शिवाजी को देखकर)** एक यात्री हूँ, भाई ! कविता करता हूँ। नाम भूषण है। उत्तर-भारत का कोना-कोना देखा है। महाराज छत्रपति शिवाजी के यशःसौरभ से खिंचे हुए इस मधुप को उनके दरस-रस की तृषा है। तुम तो कोई सिपाही दिखाई देते हो। बड़े भले और सौम्य जान पड़ते हो। कदाचित् छत्रपति के ही सैनिक हो। कहो, दर्शन करा दोगे ? तुम्हें कभी न भूलूगा।

शिवाजी—अहोभाग्य काव्यरसिक ! उनसे मिला सकता हूँ ; पर कुछ कविता मुझे भी सुनाइये।

भूषण—लीजिये सुनिये। बैठिये तो। **(कविता सुनाता है)**

इन्द्र जिमि जम्भ पर, बाड़व सुअम्भ पर,
रावन सदंभ पर रघुकुल-राज है।
पौन बारिबाह पर संभु रतिनाह पर,
ज्यों सहसबाह पर राम-द्विजराज है।

दावा द्रुम-दंड पर, चीता मृग झुंड पर,
भूषण बितुंड पर जैसे मृगराज है।
तेज तम-अंस पर कान्ह जिमि कंस पर,
त्यों मलेच्छ-बंस पर सेर सिवराज है॥

शिवाजी—आप तो वहुत अच्छी कविता करते हैं। एक बार फिर सुनाइये।

भूषण—अनुगृहीत हूँ। लीजिए, फिर सुनिए (**फिर सुनाता है। शिवाजी के बार-बार कहने पर क्रमशः १८ बार सुनाता है, परन्तु शिवाजी और सुनने को कहते है**)

भूषण—बस, बस! कोई मेरा सिर घूमा हुआ है। अब मुझे शिवाजी के दरबार में पहुँचाने का प्रवन्ध कर दो।

शिवाजी—अच्छा, अप्रसन्न क्यों होते है। मत सुनाइये। कल प्रात.काल रायगढ के फाटक पर आ जाना, आपको शिवाजी के दरबार में ले चलूगा। (**जाते है**)

(**पट-परिवर्तन**)

दृश्य आठवाँ

समय—**दोपहर**। स्थान—**कर्नाटक**।

(**बाजी घोरपड़े के गृह मे शाहजी का प्रवेश**)

शाहजी—है! यह निमन्त्रण कैसा है? यहा तो कोई भी दिखाई नही देता। घोरपड़े कहाँ है? अन्य निमन्त्रित लोग कहाँ है?

(**शाहजी लौटना चाहते है इतने मे घोरपड़े चार सशस्त्र

व्यक्तियों के साथ प्रवेश करता है और आते ही शाहजी को रस्सियों से बाँध लेता है)

घोरपड़े—शाहजी ! यह लो, भोगो अपनी करनी का फल। यह है अपने स्वामी से विद्रोह करने का परिणाम। तुमने अपने पुत्र को बहुत सिर चढ़ा रखा था। अब आदिलशाह को उसका कोई भय न रहेगा। तुम्हारी मुक्ति के लिए शिवाजी स्वयं सीधे मार्ग पर आजायगा। मैंने तो अली आदिलशाह की आज्ञा का पालन किया है।

शाहजी—(**उत्तेजित होकर**) घोरपड़े ! विश्वासघाती ! यह तूने अच्छा नहीं किया। कायर ! झूठा निमन्त्रण देकर इस प्रकार धोखे से कैद करने में तुझे लज्जा नहीं आती। पापिष्ठ ! क्या मित्रता इसी का नाम है ? (**गम्भीर होकर और शून्य में देखकर**) शिवाजी ! तुमने मेरा मान मिट्टी में मिला दिया। तुम्हें पता है और मुझे भी पता है कि तुम्हारे इन कामों में मेरी जरा भी सम्मति नहीं। मैंने तो तुम्हें ऐसे कामों से रोका था। (**घोरपड़े की ओर देखकर**) अच्छा, घोरपड़े ! तुझे इसका दण्ड अवश्य भुगतना पडेगा।

(घोरपड़े शाहजी को ले जाता है)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य नौवाँ

समय—**दोपहर**। स्थान—**रायगढ़**।

(शिवाजी का दरबार लगा है)

शिवाजी—(**द्वारपाल से**) अपना नाम 'भूषण' बतलाता है

तो उसे आदर सहित ले आओ।

द्वारपाल—जो आज्ञा, महाराज ! **(जाता है और भूषण सहित लौटता है)**

द्वारपाल—**(भूषण से)** महाराज वे सामने बैठे हैं।

भूषण—**(आश्चर्यचकित होकर स्वगत)** हैं ! ये तो वही कल वाले सिपाही हैं। **(आगे बढ़कर, शिवाजी को हाथ जोड़कर)** महाराज ! नमस्कार। अपराध क्षमा हो। कल मैंने आपको पहचाना न था।

शिवाजी—आपने कुछ भी अपराध नहीं किया कवि जी ! पर अपनी हानि अवश्य की। आप केवल अठारह बार सुनाकर रुक गये। आपको अठारह सहस्र मुद्रा दी जाती हैं और अठारह गाँवों का प्रबन्धक बनाया जाता है। आप जितनी बार सुनाते आपको उतना ही पारितोषिक दिया जाता।

भूषण—जय हो छत्रपति की। आपकी कीर्ति दिग्दिगन्त में फैले।

(एक दूत का प्रवेश)

दूत—**(प्रणाम करके)** महाराज ! आपसे चिढ़े हुए आदिलशाह के कहने से बाजी घोरपड़े ने आपके पिताजी को झूठा निमन्त्रण देकर धोखे से कैद कर लिया है। उनको कैद करने में दुष्ट अफजलखाँ का भी हाथ है। आदिलशाह ने आपको वश में करने का यह उपाय निकाला है। पिताजी ने यह पत्र भेजा है।

(पत्र देता है)

शिवाजी—**(पत्र लेते हैं। पत्र पढ़कर)** तानाजी ! भविष्य

में बीजापुर से घमासान होने के चिह्न दिखाई दे रहे हैं। सब दुर्ग-रक्षकों को सावधान कर दो। उससे पहले एक पत्र दक्षिण की सूबेदारी के लिए दिल्ली शाहजहाँ के नाम लिख दो और एक दूत को मुरारपन्त के पास बीजापुर भेज दो। और (**कान में कुछ कहते हैं**) मैं माताजी से मिलने जाता हूँ।

(**शिवाजी का प्रस्थान**)

(**पट-परिवर्तन**)

दृश्य दसवाँ

समय—**सायंकाल।** स्थान—**रायगढ़ में शिवाजी का निवास-गृह।**

(**जीजाबाई और सूईबाई चरखा चला रही हैं**)

जीजाबाई—बेटी ! जीवन भी एक युद्ध है और युद्ध से जीवन बनता है। इसमें बहुत थोड़े प्राणी सफल होते हैं। इसके लिए निर्भयता, आत्मसंयम, स्वार्थ-त्याग और परमार्थ-भावना अत्यन्त आवश्यक है। मनुष्यत्व की छाया को छोड़कर उसके वास्तविक स्वरूप को समझे बिना मनुष्य की सारी शक्तियाँ बिखरी रहती हैं। शिवाजी को यदि तुमने युद्ध-मार्ग पर तीव्रगति से आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित किया तो तुम सच्चें अर्थो में धर्म-पत्नी होगी और उन्हें इस युद्ध में अवश्य विजय मिलेगी।

सूईबाई—आप ठीक कहती हैं, माताजी। पति-पत्नी का सम्बन्ध ही ऐसा है। आपके डाले हुए संस्कार अमिट हैं। आपकी शिक्षा पूर्ण है। आपने उन्हें अक्षय बल और अनन्त

उत्साह दिया है। उनकी आत्मा स्वाधीनता का राग गा रही है। मेरी ओर से कोई कमी नहीं होगी; परन्तु मैं क्या हूँ ? आपकी छत्रछाया में वे कभी भी अनुत्साहित नहीं हो सकते। भय, असंयम, लोलुपता और स्वार्थ तो उन्हें छू भी नहीं सकते। आप तो मेरी माता के समान हैं। मै सदा आपके चरण-चिह्नों पर चलूंगी।

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी--माता जी प्रणाम ! देवी जी ! नमस्कार। **(बैठकर)** बड़ी विकट समस्या उपस्थित हो गई है। एक ओर पूज्य पिता जी हैं और दूसरी ओर अब तक का सारा परिश्रम; एक ओर पितृभक्ति है और दूसरी ओर देशभक्ति। सब प्रयत्न विफल हुआ चाहता है। क्या स्वतन्त्रता की आशा-लता यों ही मुरझा जायगी ? आदिलशाह के कहने से घोरपड़े ने पिताजी को धोखे से कैद कर लिया है। उन्होंने मुझे यह पत्र लिखा है। **(पत्र देते हैं)**

(जीजाबाई पत्र पढ़कर सूइबाई को देती हैं। सूईबाई पत्र पढ़ती हैं)

जीजाबाई--तो तुमने क्या सोचा है ?

शिवाजी—कुछ समझ में नहीं आता कि क्या किया जाय ? पिताजी के प्राण संकट में हैं ! हिंसक यवनों का कुछ भी विश्वास नहीं ! ये उपकारों को भूलना जानते हैं। तो क्या मैं आदिलशाह से क्षमा माँग लूं ?

सूईबाई—नहीं पतिदेव ! ऐसा न करना। इस प्रकार तो सुलतान और भी ऐंठ जायगा। ससुर जी के प्राणों पर भी

बन आयगी ओर स्वाधोनता के युद्ध को भी हानि पहुँचेगी। इस समय तो युक्ति और शक्ति से ही काम लेना ठीक है।

जीजाबाई—बहू ठीक कहती है, पुत्र ! मोह-बंधन में बंधने का यह समय नहीं। इस प्रकार काम बिगड़ जायगा। मुगल-बादशाह शाहजहाँ का भय दिखाकर सुलतान को वश में करना चाहिए।

शिवाजी—धन्य माता ! धन्य देवी जी ! आप दोनों ने मेरे हृदय की बात कही। मैं यहाँ आने से पहले ही एक दूत को दिल्ली और एक दूत को मुरारपन्त के पास बीजापुर भेज चुका हूँ। आपसे मुझे नई शक्ति, नई स्फूर्ति, नई ज्योति प्राप्त होती है, जीवन और जागृति का मन्त्र मिलता है। **(उठकर)** प्रणाम माता जी ! नमस्कार देवीजी। अब मैं जाता हूँ। **(जाते हैं)**

सूईबाई—माताजी ! अभी-अभी आपने पाठ पढ़ाया था और अभी-अभी परीक्षा भी ले ली गई। आपका हृदय अगाध है माताजी ! आपको पाकर मैं कृतकृत्य हो गई।

जीजाबाई—तुम उत्तीर्ण हो, मेरी बेटी ! पुत्री ! जरा इधर तो आओ। **(दोनों गले मिलती हैं)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य ग्यारहवां

समय—**दोपहर** । स्थान—**बीजापुर**

(आदिलशाह का दरबार लगा है)

अफजलखाँ—जहाँपनाह ! शाहजी के कैद होने पर भी उस लुटेरे ने अपनी चालाकी नहीं छोड़ी, उसका हौसला बढ़ता ही जाता है । शाहजी उसे मना नहीं करते, उन्हें सख्त सजा मिलनी चाहिए ।

मुरारपन्त—नहीं महाराज ! शाहजी निर्दोष हैं । उन्होंने तो पत्र लिखा है, परन्तु शिवाजी किसी की सुनता नहीं, वह स्वतन्त्र-प्रकृति का है ।

आदिलशाह—नहीं, पन्त ज़ी ! आप भोले हैं, आपको पता नहीं । अफजलखाँ ठीक कहते हैं । शाहजी चाहें तो शिवाजी आज ही सीधा हो सकता है । इब्राहीम ! शाहजी को उस अंधेरे गढ़े में कैद कर दो और सिर्फ एक छोटा सूराख खुला रहे और अगर शिवाजी अब भी सीधे रास्ते पर न आया तो वह सूराख भी बन्द कर दिया जायगा ।

इब्राहीम—अभी हुक्म बजा लाता हूँ, जहांपनाह ! (**सिर झुका कर जाता है**)

(एक दूत का प्रवेश)

दूत—(**सिर झुकाकर**) जहांपनाह ! शाहजहां ने शिवाजी को पाँचहजारी का पद देना स्वीकार कर लिया है और दक्खन की सूबेदारी भी दे दी है ।

आदिलशाह—(**घबराकर**) क्या कहा ? पन्तजी !

अफजलखां ! क्या करना चाहिए ? यह तो बहुत बुरी खबर है। तब तो सुलतानशाही का अन्त हो जायगा। पन्तजी ! आप बहुत समझदार हैं। इस राज्य के प्रधान-मन्त्री हैं ! कोई रास्ता सुझाओ।

(एक और दूत का प्रवेश)

दूत—(**सिर झुकाकर**) बादशाह सलामत कर्नाटक में फिर विद्रोह हो गया है। रहीमखां मारा गया है और दो शाही चौकियां जला दी गई हैं।

आदिलशाह—पन्तजी ! आप तो बोलते ही नहीं। इस तंग हालत में मेरा और कौन है ? उधर औरंगजेब का हमला भी जारी है। पन्तजी ! क्या उपाय किया जाय ?

मुरारपन्त—महाराज ! मैंने इस राज्य का नमक खाया है, मैं जीते जी सुलतान-शाही पर आँच न आने दूंगा। यह तो बिलकुल साधारण बात है। शाहजी को मुक्त करके कर्नाटक भेज दिया जाय और उनसे शिवाजी को पत्र लिखवाया जाय कि वह मुगल-राज्य से कुछ भी सम्बन्ध न रखें। इधर औरंगजेब से फिर सन्धि का प्रस्ताव किया जाय।

अफजलखां—शाहंशाह !

आदिलशाह—अफजलखाँ ! जरा ठहरो। अच्छा, पन्तजी ! शाहजी को अभी मुक्त कर दिया जाय। औरंगजेब को भी सन्धिपत्र अभी भेजा जाय। शिवाजी के लिये और कुछ सोचा जायगा।

(मुरारपन्त का प्रस्थान)

(पटाक्षेप)

चतुर्थ अंक

दृश्य पहला

समय—प्रातःकाल । स्थान—रायगढ़

(वन मे एक कुटीर । समर्थ स्वामी और कुछ
शिष्य बैठे है)

शिष्य—(मिलकर गाते है)

हिडोल

पथ के कांटे हटाये,
दे प्रकाश प्यारे ।
धन जन सुख का प्रसार, दु ख क्लेश दे विसार ।
काम क्रोध-लोभ-मोह, विनशे अरि सार ॥
पथ के कांटे हटाय ।

एक शिष्य—स्वामिन् ! इन दिनों हमारे देश में छत्रपति शिवाजी की बड़ी चर्चा है । चारों ओर उन्हीं की विजय के, उन्ही की वीरता के गीत गाए जाते है । बालक से लेकर वृद्ध तक एक नई आशा से जी उठे है । प्रभु ! हमे आज्ञा दीजिये, हम भी छत्रपति की सेना में प्रविष्ट होकर देश की स्वाधीनता की प्राप्ति में भाग ले ।

समर्थ स्वामी—नही वल्लभ ! तुम्हारी आवश्यकता सेना में नहीं । तुम्हारी इस वीरता और तुम्हारे इस उत्साह की मैं प्रशंसा करता हूँ, परन्तु तुम्हें दूसरा कार्य पूरा करना है, देश

के नवयुवकों के विकृत मस्तिष्क को दर्पण की भाँति निर्मल कर देना है। उन्हें सोचने-विचारने की शक्ति प्रदान करनी हैं। अपना कार्य किए जाओ। युद्ध के लिये तैयार करने वाले की कुछ कम उपयोगिता नहीं। इस लड़ाई का कोई भी अंग शिथिल नहीं रहना चाहिए। छत्रपति की प्रजा और सेना में कार्य-क्षमता के भाव भर देने से यह लड़ाई सहज ही जीत ली जायगी।

शिष्य—अनुगृहीत हूँ, भगवन्!

समर्थ स्वामी—स्वयं संयम में रहकर महाराष्ट्र-वीरों को संयम और शौर्य की घुट्टी पिला दो, सूर्योदय समीप ही है। (**कुछ रुककर**) हम छत्रपति से भेंट करेंगे। तुम सब अपने-अपने प्रदेश की यात्रा करो। सर्वशक्तिमान तुम्हें शक्ति दें।

(उठकर जाते हैं। शिष्य भी तैयार होकर जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य दूसरा

समय—**दोपहर**। स्थान—**रायगढ़**

(शिवाजी का दरबार लगा है)

(एक दूत का प्रवेश)

दूत----छत्रपति की जय हो महाराज! शाहजहाँ ने आपको पाँचहजारी पद देना स्वीकार किया है। यह आज्ञापत्र है।

(आज्ञापत्र तानाजी को देता है। तानाजी शिवाजी को देते हैं)

(शिवाजी पत्र पढ़ते हैं)

(दूसरे दूत का प्रवेश)

दूत—महाराज की जय हो ! आदिलशाह ने आपकी और शाहजहाँ की बातचीत से घबराकर पूज्य पिताजी को मुक्त कर दिया है। उधर कर्नाटक में फिर विद्रोह हो गया था; अब उन्हें कर्नाटक भेजा गया है।

शिवाजी—(**प्रसन्नता प्रकट करके**) बहुत उत्तम हुआ। पिताजी की मुक्ति से मुझे अतीव आनन्द हुआ है। आज से प्रत्येक कार्यकर्त्ता का, प्रत्येक सिपाही का वेतन एक प्रतिशत बढ़ाया जाता है। ताना जी ! पर भारतवर्ष के इस ठेकेदार ने हमें कुछ भी नहीं दिया। इसे लिख देना चाहिये कि हमें यह स्वीकार नहीं है।

तानाजी—जो आज्ञा, महाराज !

(**तीसरे दूत का प्रवेश**)

दूत—छत्रपति की जय हो। प्रजापालक महाराज ! शाहजहाँ की रुग्णता का समाचार सुनकर औरंगजेब ने आदिलशाह का सन्धि-प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। अब औरंगजेब दिल्ली की ओर चल पड़ा है। उसने गुजरात में अपने भाई मुराद को पत्र लिखा है कि 'दारा वास्तविक मुसलमान नहीं, आओ इकट्ठे मिलकर राज्य पर अधिकार कर लें; मैं तो फ़कीर हूँ, मुझे राज्य का लोभ नहीं, मैं तुम्हें ही सब कुछ सौप कर स्वयं भजन करूँगा।'

शिवाजी—वह बहुत धूर्त है। अवश्य ही कपट-खेल खेलेगा।

(**चौथे दूत का प्रवेश**)

दूत—भौसले महाराज की जय हो ! आदिलशाह ने महाराज को गुप्तरूप से पकड़ने के लिए शामराजी को नियत किया है। इस समय वह पुरन्दर के पास पहुँच चुका है। उसके साथ चारसौ बाईस सिपाही हैं। पर वे सब गुप्तरूप से चल रहे हैं।

शिवाजी—सब समझता हूँ। पर यह बहुत बुरा है कि एक हिन्दू वीर का संहार हो जायगा। कोई यवन आया होता तो अच्छा था। प्रिय रघुबल्लालजी ! कवाजी ! आप दोनों को यह कार्य सौंपा जाता है। शामराजी को शीघ्र जीवित पकड़ लाओ। देखना, प्राणान्त न कर देना। हाँ, यदि किसी प्रकार भी जीवित हाथ न आये तो फिर छोड़ना भी मत।

(रघुबल्लाल और कवाजी प्रणाम कर जाते हैं)

(पाँचवें दूत का प्रवेश)

दूत—छत्रपति की जय हो। महाराज ! जावली का राजा चन्द्रराव किसी प्रकार भी आपका प्रभुत्व स्वीकार नहीं करता। वह गुप्तरूप से आदिलशाह को सहायता दे रहा है। उसका एक गुप्त-पत्र हमारे साथियों ने पकड़ लिया है। यह पत्र है। **(पत्र तानाजी को देता है। तानाजी शिवाजी को देते हैं)**

तानाजी—महाराज ! आज्ञा हो तो चन्द्रराव पर आज ही आक्रमण कर दिया जाय।

शिवाजी—**(पत्र पढ़कर)** नहीं ताना जी ! अभी आक्रमण की आवश्यकता नहीं। हिन्दू प्राणों का कुछ मूल्य होता है।

उसे फिर समझाने का प्रयत्न करते हैं । हमारे काम का है; उसके मिलने से हमारी शक्ति बढ़ेगी । उसे एक पत्र फिर लिख दो । यदि वह सीधा न हुआ तो फिर मैं स्वयं उस पर आक्रमण करूँगा ।

तानाजी—जो आज्ञा महाराज की ! **(पत्र लिखते हैं)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य तीसरा

समय—**रात्रि** । स्थान—**बीजापुर में अफजलखां का गृह (अफजलखां, उसकी बेगम, फाजिलखां और सुलतान बैठे हैं)**

सुलताना **(तंबूरा लेकर गाती है)**

गीत

बहार आई है देख सजनी, कुसुम-कली यह खिली नहीं है ।
वियोग-पतझड़ में सूखी डाली, सुपत्र पाकर हिली नहीं है ।।
न रस मिला और न गन्ध अच्छी, न वन-सदन की सखी-सहेली ।
न सीख मीठी मिली मधुप की, घड़ी विरह की टली नहीं है ।।
भुलाई तन की कभी से सुध-बुध, कभी से वर्षा की आस में है ।
न तोड़, रख धैर्य, वन के माली, हृदय की प्रतिमा मिली नहीं है ।।

फाजिलखां—इसे सारा दिन हिन्दी का गीत गाने की ही धुन है । अब्बाजान शिवाजी को पकड़ने जा रहे हैं और इसे 'बहार' की पड़ी है । ऐसे लड़ाके आदमी का सामना खतरे से खाली नहीं ।

अफजलखां––फिर तूने वही बात कही। तू आदमी है या चूहा। अफजलखां का बेटा होकर ऐसी कायरता की बातें तूने कहाँ से सीख लीं ? वह मच्छर मेरे सामने क्या चीज है ? मैं उसे चुटकी में मसल दूंगा।

बेगम––(**अफजलखां से**) क्या तुम शिवाजी से लड़ने जाते हो ? ऐसा न करना। वह साँप है। उसकी फुंकार मामूली नहीं। उससे लड़ने का विचार छोड़ दो।

अफजलखां––सब एक ही ओर बहने लगे। वह हौवा है या अजगर, जो मुझे निगल जायगा। उस जरा से दो बालिश्त के आदमी को पकड़ना क्या कोई मुश्किल काम है ? वह तो मेरा नाम सुनते ही नाक रगड़ने लगेगा। मैं जाते-जाते ऐसी मार-काट मचाऊँगा और ऐसा दबदबा दिखाऊँगा कि उसे नानी याद आजायगी। मैं आज दरबार में सबके सामने छाती ठोंक कर आया हूँ। या तो उसे नंगे पाँव दरबार में उपस्थित करूँगा या उसका सिर काट लाऊँगा। अब मैं किसी तरह भी रुक नहीं सकता। पाँच हजार घुड़-सवार और सात हजार पैदल मेरे साथ होंगे।

बेगम––तुम किसी की क्यों मानोगे। मुझे तो बड़ा डर लग रहा है।

सुलताना––अब्बाजान! अम्मा जी की बात मान लो न!

अफजलखां––नहीं बेटी! यह तो यों ही डरती है। क्या तू मेरे साथ चलेगी ?

सुलताना—औरतों का लड़ाई में क्या काम ? हम भी कोई राजपूत औरतें हैं, जो घोड़े पर चढ़कर तलवार चलाती फिरें। वाह ! कैसी बेतुकी बात है। हमारी लड़ाई तो यही है। **(बालों पर हाथ फेरकरे तम्बूरे को उठाकर फिर 'बहार आई' गाने लगती है)**

(पट-परिवतन)

दृश्य चौथा

समय—**प्रातःकाल।**

स्थान—**रायगढ़ में शिवाजी का निवास-गृह ।**

(जीजाबाई प्रतिराश तैयार कर रही है। सूईबाई कवच, तलवार आदि ठीककर रही है)

(एक दूत का प्रवेश)

दूत—**(जीजाबाई से)** माताजी ! एक अत्यन्त आवश्यक समाचार है। क्या महाराज अभी उपासना-गृह से लौटे नहीं ?

जीजाबाई—नहीं, पुत्र। उस चटाई पर बैठो। अभी आते होंगे।

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—माताजी प्रणाम ! देवीजी ! नमस्कार ! **(दोनों अभिवादन करती हैं)**

दूत—**(उठकर)** महाराज की जय हो। अफजलखाँ ने कल सुलतान के सामने आपको पकड़ लाने की प्रतिज्ञा की है।

उसके साथ पाँच सहस्र घुड़सवार और सात सहस्र पदाति होंगे। (**पत्र देकर**) हमारे नायक ने यह पत्र भेजा है।

शिवाजी—(**पत्र लेकर और पढ़कर**) अच्छा, दूत। तुमने समय पर सूचना दी। जाओ, बीस गुप्तचर लेकर अफजलखाँ की सेना में जा मिलो। देखना, प्रत्येक समाचार शीघ्र और ठीक-ठीक पहुँचे। तानाजी से कह दो कि मैं अभी आता हूँ।

(**दूत प्रणाम करके जाता है**)

शिवाजी—माताजी! बीजापुर का सुलतान अब बहुत घबरा गया है। यह अफजलखाँ भी बड़ा दुष्ट है। बारह सहस्र सैनिकों से मुठभेड़ की तो कोई बात नहीं, इतनी बड़ी टक्कर में हमारे वीरों की व्यर्थ की हानि होगी, यही चिन्ता है। (**काष्ठपीठ पर बैठते हैं**)

जीजाबाई—(**जलपान आगे रखकर**) पुत्रवर! घबराने की कोई बात नहीं। युद्ध में तो जन-संहार हुआ ही करता है।

सूईबाई—अथवा किसी और युक्ति से काम लिया जाय। लाठी भी न टूटे और साँप भी मर जाय।

शिवाजी—(**जलपान समाप्तकर, उठकर कवच तथा शस्त्रास्त्र पहनकर जाते हैं। जाते-जाते**) देखें, तानाजी और कवि जी क्या कहते हैं।

(**पट-परिवर्तन**)

दृश्य पाँचवाँ

समय—**दोपहर।**

स्थान—**रायगढ़ में मन्त्रणा-भवन।**

[**तानाजी और भूषण कवि बैठे हैं**]

तानाजी—कविजी ! आपकी कल वाली कविता तो बहुत ही उत्तम रही। महाराज पर उसका बड़ा प्रभाव पड़ा था।

भूषण—तानाजी ! अनुगृहीत हूँ। महाराज के कार्य ही ऐसे हैं कि कविता आपसे-आप बनने लगी है।

(दूत का प्रवेश)

दूत—**(प्रणाम करके)** महाराज, शीघ्र ही आ रहे हैं। **(जाता है)**

तानाजी—कविजी ! इस घृणित यवन की धृष्टता तो देखिये। महाराज को जीवित या मृत पकड़ लाने की प्रतिज्ञा। सियार की भूखे सिंह से टक्कर।

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—हर हर महादेव ! **(तीनों आपस में अभिवादन करते हैं; बैठकर)** तानाजी ! अफजलखाँ के सम्बन्ध में आपने क्या निश्चय किया ? कविजी आपका मन क्या कहता है ?

तानाजी—मेरी सम्मति तो यह है कि उसे सिर उठाते ही कुचल डालना चाहिये।

भूषण—महाराज ! इसके साथ सम्मुख युद्ध ठीक नहीं रहेगा। इसे तो समय-कुसमय तंग करके नष्ट कर देना

चाहिये ।

शिवाजी—मेरा हृदय भी यही कहता है । क्यों ? तानाजी ! इसे पहले आने दिया जाय और फिर इससे छेड़छाड़ आरम्भ की जाय ।

तानाजी—है तो ठीक, पर इसमें समय बहुत लगेगा ।

शिवाजी—अच्छा इस पर और विचार किया जायगा । चलो, दरबार में चलें ।

(तीनों जाते हैं; दरबार में पहुँचकर शिवाजी सिंहासन पर बैठते हैं । भूषण और तानाजी भी यथास्थान बैठते हैं । सब सभासद खड़े होकर फिर बैठते हैं । कई कार्यकर्त्ता तानाजी को घेर लेते हैं)

शिवाजी—तानाजी ! शामराजी पकड़ा गया या नहीं ।

तानाजी—महाराज ! वह पकड़ा तो जाता; परन्तु जावली के चन्द्रराव ने उसे अपने राज्य में से होकर भाग जाने दिया; इसलिए बना-बनाया काम बिगड़ गया । इस पर रघुबल्लालजी और कवाजी क्षुब्ध हो गये । रघुबल्लालजी ने पहले तो चन्द्रराव से मित्रता स्थापित की फिर उसका सिर काट लिया और अब जावली का राज्य महाराज के अधिकार में है ।

शिवाजी—रघुबल्लालजी ने यह क्या किया ? किसकी आज्ञा से ऐसा घोर कार्य किया ? क्यों न पहले मुझ से पूछ लिया ? रघुबल्लालजी को उपस्थित करो ।

(तानाजी का संकेत पाकर एक पहरेदार रघुबल्लालजी को बुलाता है)

रघुबल्लालजी––(**प्रणाम करके**) महाराज ! मै अपना अपराध स्वीकार करता हूँ; पर चन्द्रराव की दुष्टता ने मुझे उत्तेजित कर दिया था। उसने महाराज के शत्रु को सहायता देकर बहुत भारी अपराध किया था। (**सिर झुका लेता है**)

शिवाजी––तुम्हारा हेतु ठीक हो सकता है, किन्तु तुमने इस सम्बन्ध में आज्ञा क्यो न ली ? इस प्रकार अनुशासन ढीला होता है। अनुशासन भग करने वाला अवश्यमेव दण्ड-नीय है, चाहे मै ही क्यो न होऊँ। तुम तो बहुत नृशस निकले। तुम्हें इस अपराध में हिन्दू-सेना के सेनापति पद से पृथक् किया जाता है। तुम्हे इस मास का वेतन भी नही मिलेगा। (**कुछ सोचकर**) पर तुमने राज्य की भलाई भी की है; इस-लिए तुम्हे पठान-सेना की बागडोर दी जाती है; काँटे को काँटा ही वश में रखे। पर इस बात का प्रण करो कि फिर कभी अनुशासन की अवहेलना न करोगे।

रघुबल्लालजी––(**प्रणाम करके**) शिरोधार्य करता हूँ, महाराज ओर प्रण करता हूँ कि सदा अनुशासन मे रहूँगा।

शिवाजी––ताना जी ! कृष्णानदी के उद्गम पर जो किला तैयार किया गया है उसका नाम प्रतापगढ़ रखा जाय।

(**माधोजी प्रवेश करता है**)

माधोजी––(**प्रणाम करके**) छत्रपति महाराज की जय हो ! कल्याण का प्रबन्ध आबाजी भली भाँति कर रहे हैं; उन्होंने मुझे एक हजार सैनिकों सहित महाराज की सेवा में

भेजा है।

शिवाजी––समय पर आए हो, माधोजी !

(एक गुप्तचर का प्रवेश)

दूत––महाराज की जय हो ! औरंगजेब बड़ा धूर्त निकला है। उसने अपने पिता को कैद कर लिया हैं, मुराद और दारा को धोखे से मार डाला है और वह स्वयं बादशाह बन बैठा है। शुजा बंगाल छोड़कर भाग गया है।

शिवाजी––औरंगजेब की धूर्तता कौन पा सकता है। पर एक यवन ने दूसरे यवन को समाप्त कर दिया। हमारे स्वराज्य के लिए लाभ की ही बात है। कृष्णा भास्कर ! आज ही दिल्ली के लिए चल पड़ो और औरंगजेब से हमारी मित्रता स्थापित करने का प्रयत्न करो। सुलतान से निपट लें फिर मुगलों की बारी आयगी, पर शीघ्र लौटना।

कृष्णजी––जो आज्ञा (**प्रणाम करके जाते है**)

शिवाजी––तानाजी ! आज खेरा पर आक्रमण करना है। सेना को सुसज्जित रहने की आज्ञा दे दो।

तानाजी––जो आज्ञा (**जाते हैं**)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य छठा

समय––**सायंकाल**। स्थान––**तुलजापुर**

एक ग्रामीण––(**अपनी स्त्री से**) अरे भागो ! भागो !!

अत्याचारी अफजलखाँ इस गांव में आया चाहता है। दादा का सारा गाँव उसने जला दिया और पाँच सौ नवयुवकों की हत्या कर दी। सौ स्त्रियों को तथा दो सौ पुरुषों को बन्दी भी कर लिया है। शीघ्रता करो, शीघ्रता करो। मोहिनी कहाँ है ?

स्त्री—बड़ा हिंसक जीव है। अरी दुर्गा, ओ दुर्गा दौड़ो। भागो। लो, यह गठरी पकड़ लो, मै बच्चे को उठालू।

(तुलजापुर की देवी के नष्ट-भ्रष्ट मन्दिर को देखकर)

एक पुरुष—क्या किसी में इतनी सामर्थ्य नहीं कि नीच अफजलखाँ को दण्ड दे सके। यह मन्दिर कितना विशाल था। दुष्ट ने बिलकुल नष्ट कर दिया। **(नीचे देखकर)** त्राहि ! त्राहि ! यह तो पुजारी का कटा हुआ सिर है ! प्रलय है ! घोर विनाश !

(पट-परिवर्तन)

दृश्य सातवां

समय—**प्रातःकाल।**

स्थान—**प्रतापगढ़ में शिवाजी का मन्त्रणा-भवन**

(शिवाजी, तानाजी और भूषण कवि बैठे हैं)

शिवाजी—वीर देशमुख जी। आप बहुत शूर हैं, मैं आप पर बहुत प्रसन्न हूँ। आपकी एक-एक बात देखकर मेरा हृदय आह्लादित हो रहा है, 'खेरा' अब हमारे अधीन है। आपके पिता

ने युद्ध में वीरगति पाई; इसके लिए मुझे बहुत शोक है। मैं कभी भी किसी हिन्दू-वीर को मारना नहीं चाहता, परन्तु विवश होकर ऐसा करना पड़ा है। आपकी युद्ध-चातुरी और खड्ग चलाने की शक्ति देखकर मुझे उत्साह और स्फूर्ति मिली है। जरा इधर तो आइये (**देशमुख आगे आता है, शिवाजी उसे हृदय से लगाते हैं**) आप मुझे आत्मवत् प्रिय प्रतीत होते हैं बोलिए, क्या विचार है ? कहीं जाना चाहते हैं अथवा हमारे साथ-साथ मातृ-भूमि के बन्धन काटने के लिए तत्पर हैं ?

देशमुख—आपका अनुचर हूँ, स्वामी ! खड्ग की शपथ खाकर कहता हूँ कि आपके लिए बलिदान हो जाऊँगा।

शिवाजी—धन्य हो देशमुखजी ! मैंने जैसा सोचा था, आप वैसे ही निकले। जाइये रायगढ़ की रक्षा कीजिए, आपको वहाँ का दुर्गाध्यक्ष बनाया जाता है। तानाजी ! एक आज्ञापत्र तैयार कीजिए।

देशमुख—जो आज्ञा, प्रभु ! (**जाता है**)

(**एक दूत का प्रवेश**)

दूत—महाराज ! अफजलखाँ समीप आ पहुँचा है। उसने दो गाँव और जला दिए हैं। वह स्त्रियों पर भी अत्याचार कर रहा है। तुलजापुर की देवी का मन्दिर बिलकुल नष्ट-भ्रष्ट हो गया है। पुजारी के दो टुकड़े कर दिए गए हैं।

(**एक दुर्ग-रक्षक के साथ गोपीनाथ का प्रवेश**)

दुर्ग-रक्षक—महाराज की जय हो। अफजलखाँ के पास से ये पण्डित जी आए हैं! (**अभिवादन करके जाता है**)

(**शिवाजी गोपीनाथ को एक आसन बैठने का संकेत करते हैं**)

गोपीनाथ—(**अभिवादन करके बैठ जाता है**) हाँ, महाराज मेरा नाम गोपीनाथ पण्डित है। मुझे सेनापति अफजलखाँ ने आपकी सेवा में भेजा है। वे चाहते हैं कि क्यों व्यर्थ में मानव-रक्त बहाया जाय। आपस की मैत्री से ही क्यों न शान्ति स्थापित कर ली जाय। सेनापति जी कहते हैं कि 'शाहजी हमारे परम-मित्र हैं, इसलिए शिवाजी हमारे अभिन्न हैं, हम उनसे युद्ध करना अच्छा नहीं समझते; अतः किसी स्थान पर आपस में मिलकर सन्धि कर लेनी चाहिए।' (**पत्र देकर**) यह पत्र है।

शिवाजी—(**पत्र लेकर**) यह तो फारसी में है। (**पत्र तानाजी को देकर गोपीनाथ से**) पण्डित जी! आप हमारे माननीय हैं। आपके कथन को हम सिर झुकाकर स्वीकार करते हैं। आपके दर्शनों से हम कृतकृत्य हो गये; पर पूज्यवर! बात यह है कि हमें कोई स्वार्थ नहीं। हम तो केवल यवनों के अत्याचार से पीड़ित ब्राह्मण, गौ, स्त्री, बालक, धर्म-शास्त्र और मन्दिरों की रक्षा के लिये ही प्रयत्न कर रहे हैं। आप ही देखिये! अफजलखाँ ने कितने गाँव जलाए हैं! कितनी स्त्रियों के सतीत्व पर आक्रमण किया है! कितने ब्राह्मणों पर खड्ग चलाई है। कितने मन्दिरों का विध्वंस किया है। कितने द्विजों

को बन्दी बनाया है ! और आर्य-सन्तान कहलाकर भी हम चुपचाप सब कुछ देख रहे हैं। न जाने, हमारा रक्त शीतल क्यों हो गया है ? आप इस घाव को अनुभव करते होंगे; परन्तु या तो आपको कभी अवसर नहीं मिला अथवा आप किसी विशेष बात की प्रतीक्षा में होंगे।

गोपीनाथ—(**अश्रु बहाते हुए**) महाराज ! आप सत्य कहते हैं। हम लोग सोए पड़े हैं। इतना अत्याचार देखकर भी हमारी आँखें नहीं खुलतीं।

शिवाजी आप सौम्य-प्रकृति हैं, पण्डितजी आप ही कहिये हम कोई पाप कर रहे हैं ? क्या धर्म की रक्षा करना बुरा कार्य है ? मान लीजिए हम न हों अथवा किसी धोखे से हमारे प्राण ले लिये जाँय, तो क्या होगा ? केवल अत्याचार और हिंसा की ज्वाला तीव्र हो जायगी।

गोपीनाथ—आपका कहना यथार्थ है, महाराज (**धीरे से**) यह अफजलखाँ भी आपको धोखा देना चाहता है। इस घोर पाप-नाटक का सूत्रधार मैं बनाया गया हूँ। महाराज ! आपने मेरे नेत्र खोल दिये।

शिवाजी—कोई बात नहीं, पण्डित जी ! आप निर्दोष हैं। आप पर कोई आँच न आयेगी। हम अफजलखाँ से अवश्य मिलेंगे। और पिछला सारा विरोध मिटा लेंगें। आप उसे हमसे किले और नदी के बीचोंबीच एकान्त स्थान में मिला दीजिये। केवल दो दी व्यक्ति साथ हों। (**तानाजी से**) तानाजी ! इन्हें

भोजन कराकर सम्मान सहित विदा कीजिये ।

(तानाजी और गोपीनाथ जाते हैं)

भूषण—महाराज ! अविश्वस्त का कभी विश्वास नहीं करन ाचाहिए और विश्वस्त का भी पूर्णतः विश्वास करना ठीक नही ।

शिवाजी—कविजी ! आपकी शुभ सम्मति का ही अनुसरण करूँगा । लीजिए, कविजी । अफजलखां के फारसी के पत्र का उत्तर संस्कृत में लिख दीजिये ।

(पट-परिवर्तन)

दृश्य आठवां

समय—**दोपहर** । स्थान—**प्रतापगढ़ में शिवाजी का निवास-स्थान**

(जीजाबाई और सूईबाई बैठी है)

जीजाबाई—पुत्री, शिवाजी को इस प्रकार व्यस्त देख कर मुझे बहुत प्रसन्नता होती है । यह नीच अफजलखाँ मार्ग का कण्टक है, शीघ्र ही इसका नाश होना चाहिए ।

सूईबाई पहले यह दूर बैठा बाण चलाता था, परन्तु अब सिर पर ही आ चढ़ा है । बहुत अत्याचारी है । इसने मार्ग में प्रलय मचा दी थी ।

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—**(अभिवादन करके)** माता जी ! अफजलखाँ ने गोपीनाथ नामक एक पण्डित को यह कहला कर भेजा था

कि वह मित्रता करना चाहता है। मैंने उससे सब भेद ले लिया है। अब मेरी अफजलखाँ से किले और नदी के बीच एकान्त स्थान पर भेंट होगी।

जीजाबाई---मेरे वीर ! देखना, उसके धोखे में न आ जाना। यवन धोखा देने में बड़े प्रवीण होते हैं। उस महाकाय दैत्य का हाथ तुम्हारे शरीर से स्पर्श न करे।

सूईबाई---सब प्रकार से सावधान होकर जाइये और अपने अंगरक्षकों को गुप्तरूप से पहले ही वहाँ भेज दीजिये।

शिवाजी---आपकी शुभ कामनाएँ मेरी रक्षा करेंगी।

(सूईबाई से) देवी जी ! मेरा बघनखा तो ले आओ। **(सूईबाई बघनखा ले आती है। शिवाजी बघनखे को अपने वस्त्रों में छिपा लेते हैं)** अब ठीक है। माताजी ! देवी जी ! प्रयाण की आज्ञा दो।

(जीजाबाई और सूईबाई उठती हैं। शिवाजी जाते है)

पट-परिवर्तन

दृश्य नौवां

समय—**दोपहर**। स्थान—**प्रतापगढ़**।

शिवाजी **(सिंहासन पर बैठकर)** माधोजी ! आप एक सहस्र सिपाहियों के साथ अफजलखाँ की सेना के पीछे गुप्त रूप से छिपे रहो और मेरा संकेत पाते ही शत्रु के शिविरों में आग लगाकर भूखे सिंह की भाँति शत्रु पर टूट पड़ो। तानाजी और नेताजी पालकर मेरे साथ रहेंगे। रघुनाथजी कोंकन की ओर जाएँ और भाऊजी कोंकन के इस ओर रहें। कविजी तथा

मोरोजी इस दुर्ग की और पूर्णधर की रक्षा करेंगे।

(सब क्रम से अभिवादन करके जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य दसवां

समय--**सायंकाल** । स्थान--**प्रतापगढ़ और नदी के बीचोंबीच** ।

(एक एकान्त स्थान पर अफजलखाँ टहल रहा है)

अफजलखाँ---(**ठहरकर**) आते ही ऐसा हाथ मारूँगा कि सर धड़ से अलग हो जायगा। इसके मारे नाक में दम था। आज सब सफाई हो जायगी। पर अभी तक आया नही ? कही गोपीनाथ पण्डित को उसने धोखा तो नही दिया। (**सामने देखकर**) कोई आ तो रहा है ? यह तो छोटा-सा है। यही है। छि· ! यह क्या है मेरे सामने ?

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी---आपके दर्शन पाकर मै निहाल हो गया। कहिये, सकुशल तो है ? आज दो हृदयो का मल धुल जायगा।

अफजलखाँ--(**चाव से**) आज मेरी खुशी का ठिकाना नही। आप तो बहुत भले मालूम होते है। आइए गले मिल लें।

(शिवाजी आगे बढ़ते है। अफजलखाँ उनका गला पकड़ना चाहता है। शिवाजी उसके पेट में बघ-नखा घुसेड़ देते है। अफजलखाँ की आंतें

बाहर निकल आती हैं, वह कटे वृक्ष की
भाँति भूमि पर गिर पड़ता है । शिवा-
जी उसका सिर काट लेते हैं ।
अफजलखां के दोनों साथी आगे
बढ़ते हैं । तानाजी उनका संहार
कर डालते हैं । अफजलखां का
शव एक टीले पर रख दिया
जाता है । चारों ओर कोला-
हल मच जाता है । शिवा-
जी शंख-ध्वनि करते हैं ।
अफजलखां के तम्बुओं
में आग जाती हैं ।
माधोजी शत्रुओं
को ढूंढ़ ढूंढ़ कर
काट रहे हैं)
(पटाक्षेप)

●

पंचम अंक

दृश्य पहला

(समर्थ स्वामी का आश्रम। कुछ शिष्य बैठे है)

पहला शिष्य—भाई! छत्रपति ने अफजलखाँ का इस प्रकार एकान्त में बघनखे से संहार कर दिया, एक अत्याचारी का विनाश हो गया; पर धर्म की दृष्टि से यह ठीक नहीं; क्योंकि इसमें सत्य की हानि हुई है। शिवाजी ने असत्य से काम लिया है।

दूसरा शिष्य—अजी आप भी पूरे साधू निकले। आपको विदित नहीं कि राजनीति और धर्म दो पृथक् बातें हैं। राजनीति में धर्म का क्या काम ?

पहला शिष्य—चाहे कुछ भी हो, छत्रपति के धर्म की हानि ही हुई है। अफजलखाँ का आह्वान करके उसे युद्ध में मारते तो धर्म की मर्यादा स्थिर रहती। प्राण जाने पर भी राजपूत अपने धर्म को नहीं छोड़ते।

दूसरा शिष्य—तभी तो राजपूतों को कभी सफलता नहीं मिली। उन्होंने सदा अपने ही प्राण गंवाए और देश को पराधीन भी बना दिया!

(समर्थ स्वामी का प्रवेश। सब उठकर प्रणाम करते हैं)

समर्थ स्वामी—**(बैठकर)** आज कृष्णा नदी की ओर बहुत दूर निकल गये थे, देरी हो गई **(दोनों शिष्यों को**

सम्बोधित करके) तुम्हारा विवाद हमने सुन लिया है। तुम दोनों भूले हुए हो। सबसे पहली बात तो यह है कि शिवाजी ने अफजलखाँ को मार कर कोई अधर्म नहीं किया, अपितु एक महापुण्य का कार्य किया है। उस नृशंस और पापिष्ट की मृत्यु से असंख्य असहाय प्राणियों की रक्षा हुई है। धार्मिक स्थानों, वेद-शास्त्र और हिन्दुत्व का उद्धार हुआ है। इस पर भी धोखा तो अफजलखां ने ही दिया था। छत्रपति ने उसके दाँव को समझ कर अपनी और अपने राज्य की रक्षा कर ली। इसमें असत्य की कौन-सी बात है ? यदि, ईश्वर न करते, शिवाजी का कुछ बिगड़ जाता तो क्या वे धर्मात्मा कहलाते ? अपने नाश के साथ-साथ सहस्रों मनुष्यों का संहार करवा देते और गाय, स्त्री, द्विज, संन्यासी तथा मन्दिरों के लिए प्रलय का साधन बन जाते ? तो क्या वह धर्म होता ? कभी नहीं, घोर अधर्म होता ? इसलिए उन्होंने 'सत्य' की स्थापना की है। वास्तव में तुमने 'सत्य' का अभिप्राय ही नहीं समझा। 'सत्य' का तात्पर्य है उद्देश्य और परिणाम में सत्य; वचन और दिखावे में सत्य नहीं। देखो, हम यहाँ चार आम रखकर जायें और कुछ समय के अनन्तर आकर देखें तो यहाँ केवल एक आम पड़ा हो। मान लो कि तीन आम तुमने खा लिए हों। पूछने पर तुम सत्य बोलने और रहस्य छिपाने की इच्छा से कहो कि मैंने एक आम नहीं खाया। अब तुमने तो सत्य कहा कि मैंने एक आम नहीं खाया, अर्थात् तीन खा लिए; परन्तु हम उसका अभिप्राय यह समझें कि तुमने एक भी आम नहीं खाया। तो तुम्हारे इस कथन से, इस व्यवहार

से, उद्देश्य और परिणाम में असत्य की पुष्टि होगी; इसलिए तुम्हारा यह 'सत्य' कथन भी 'असत्य' होगा। अब बताओ जिसका उद्देश्य और परिणाम बहुत अधिक सत्य की रक्षा करना है, वह कार्य 'सत्य' हुआ अथवा 'असत्य' ?

पहला शिष्य—'सत्य' प्रभो !

समर्थ स्वामी—अहो प्रिय शिष्य। उचित है। इसीलिए ! तो श्रीराम द्वारा बाली का बध 'असत्य' नहीं था; योगिराज श्रीकृष्ण की प्रेरणा से युधिष्ठिर द्वारा कहा गया 'अश्वत्थामा मारा गया' 'असत्य' नहीं था; क्योंकि उनका उद्देश्य और परिणाम बहुत अधिक 'सत्य' था। जब यह सिद्ध हो गया कि छत्रपति का कार्य 'सत्य' है, धर्म है, तो यह सिद्धान्त स्वयमेव परास्त हो जाता है कि राजनीति और धर्म दो पृथक् बातें हैं। धर्म के बिना राजनीति की स्थिति हो ही नहीं सकती। आज छत्रपति से भेंट करनी है, उनके कई पत्र मिले हैं, वे स्वयं भी कई बार इस ओर आ चुके हैं; पर मेल नहीं हो सका। आज हम स्वयं जाते हैं।

(समर्थस्वामी का प्रस्थान)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य दूसरा

समय—**दोपहर**। स्थान—**प्रतापगढ़**

शिवाजी—अफजलखाँ के नाश के पश्चात् बीजापुर से दस बार युद्ध हुआ है। आज तक जितने भी वीरों का संहार हुआ है, मुझे उनका बहुत शोक है। उनमें से देशमुख का तो

बहुत ही खेद है। बड़ा शूर और उत्साही था। सारी देह लहू से लथपथ हो रही थी, अगणित घाव थे, फिर भी मुख विवर्ण न हुआ था। मुझे शत्रुओं ने घेर लिया था, वीर बीच में कूद पड़ा। कहने लगा—'जाइये, शीघ्र जाइये, आपके प्राण अमूल्य हैं, मुझे आज ऋण चुकाने दो, परीक्षा में उत्तीर्ण होने दो, मुझ जैसे सेवक आपको अनेक मिल जाएँगे; पर आप जैसे स्वामी महाराष्ट्र को कहाँ मिलेंगे, जाइये, जाइये हठ न कीजिए। मैं तब तक यहाँ से न हटूंगा जब तक आप किले में सुरक्षित पहुँच कर तोप का शब्द न कर दें।' प्रणवीर ने प्राण देकर मेरी रक्षा की। मैं उससे क्योंकर उऋण हो सकूंगा। प्रभु, उसकी आत्मा को सद्गति दें। वीर ! तुझे सहस्र बार प्रणाम है। (**आँखों में अश्रु आ जाते हैं**)

तानाजी—वास्तव में, महाराज ! देशमुख देश का मुख था; महाराष्ट्र का सूर्य था। उसका वियोग असह्य है।

भूषण—महाराज, आप सहनशील हैं, धीर हैं। सुख-दुःख, हानि-लाभ, जन्म-मरण चलता ही रहता है। बीजापुर का सुलतान हारकर बैठ गया है। आपने अब मुगलों से छेड़-छाड़ आरम्भ की है। औरंगजेब बड़ा चंचल है। इस समय उसके सेनापति शाइस्ताखाँ ने 'पूना' जीत लिया है और वह यवन-कुल-कलंक आपके ही महल में निवास रखता है। शत्रु को इस प्रकार घर में ठहरने देना उचित नहीं।

माधोजी—महाराज ! उसने 'पूना' के सब राजद्वारों पर प्रहरी नियत किये हुए हैं। बिना आज्ञा कोई भी नगर में प्रवेश नहीं कर पाता।

भूषण—पर आज रात्रि के समय मराठों की एक बरात नगर में जाने वाली है। अफजलखां से एकांत में मित्रता स्थापित की थी; शाइस्ताखाँ से रात्रि में मैत्री कर लेनी चाहिए।

शिवाजी—मैं सब देख-सुन रहा हूँ, अमात्यगण! पर वीरों की क्षति से मेरे मन पर चोट लगती है, इसलिए कुछ उन्मना हूँ। हाँ! तो आज रात्रि को मैं, माधोजी, तानाजी और पच्चीस मावली वीर चलेंगे। माधोजी और रघुनाथजी इधर किले में तैयार रहेंगे। प्रतापराव जी और नेताजी एक सहस्र सैनिक लेकर उधर पहाड़ी में छिपे रहेंगे।

(द्वारपाल का प्रवेश)

द्वारपाल—छत्रपति की जय हो। श्रीसमर्थ स्वामी जी भेंट करने आ रहे हैं।

(शिवाजी सहसा उठकर बाहर जाते हैं और समर्थ स्वामी को प्रणामकर सिंहासन पर लाकर बिठाते हैं। स्वयं उनके पांव दबाने लगते हैं। सब मन्त्री प्रणाम करते हैं)

शिवाजी—(**भूषण से**) कवि जी! श्री स्वामी जी के लिये अर्घ्य और फल-फूल ले आइये।

(भूषण जाते हैं और सब वस्तुएँ ले आते हैं)

शिवाजी—स्वामिन्! मैं कृतकृत्य हो गया। आपका यश चिरकाल से सुन चुका था। आपके दर्शनों की उत्कट अभिलाषा थी। अनेक बार आपके आश्रमों में गया; किन्तु आप

सर्वदा पर्यटन के लिए गये होते थे। आपका पत्र पढ़कर मानों मैंने अमृतगंगा में स्नान कर लिया था और अब आपके दर्शन-रस का पानकर मैं अमर हो गया हूँ। कहिये, कहिये, प्रभु! आपकी किस प्रकार सेवा करूँ? आपको क्या भेंट दूँ? यह राज्य आपका है, आप इसे ग्रहण कीजिए। मैं आपके चरणों में रहकर शेष जीवन प्रभु के स्मरण में व्यतीत करूँगा।

समर्थ स्वामी—तुमसे भेंट करके ही हमने सब कुछ दान-दक्षिणा प्राप्त करली। छत्रपति! तुम जैसे वीरों का सहयोग इस देश को बड़ी कठिनता से प्राप्त हुआ है। तुमसे प्रजा की रक्षा और दोनों की पालना हो रही है। हम परिव्राट् हैं, हमें राज्य की आवश्यकता नहीं, यह तुम्हें ही समर्पित है, यह कार्य तुम्हारा ही है। हमारा कर्तव्य तो दूसरा है। तुमने दुष्टों का संहार किया है; परमपिता तुम पर बहुत प्रसन्न होंगे। तुम्हारी कीर्ति का अनन्त प्रसार होगा। लोभ और मोह छोड़कर अपने कर्तव्य का पालन करते रहो। अपने अमात्यों से एकमति होकर सदा इस संग्राम को अग्रसर करते रहो; तुम्हें कभी भी असफलता नहीं मिलेगी। विपत्ति में कभी भी अधीर न होना; शत्रु तुम्हारे नाम से काँपेंगे। अफजलखाँ को मारकर तुमने भूमि का बहुत-सा बोझ हलका किया है।

शिवाजी—(**चरणों की धूलि मस्तक पर लगाकर**) मेरा जीवन सफल हुआ, प्रभो! आपके उपदेश को कभी न भूलूगा स्वामिन्!

समर्थ स्वामी—हाँ ! एक बात और सुनो, शिवा ! तुमने अपने पुत्र को अपने पास रखकर अच्छा नहीं किया। सात-आठ वर्ष की अवस्था के अनन्तर बालक का माता-पिता के साथ रहना सदा हानिकर होता है। छत्रपति ! उसे तो गुरु के समर्पण कर देना चाहिये और बड़े व्यक्तियों को तो भूलकर भी अपने बालक को अपने समीप नहीं रखना चाहिये; क्योंकि तुम जैसे कार्यव्यस्त पुरुषों को अपने पुत्र की शिक्षा-दीक्षा का अवसर ही कब मिलता है। देखो, श्री रामचन्द्र जी अपने पिता से पृथक् होकर रहे थे; तुम स्वयं पिता के साथ नहीं रहे।

शिवाजी—आप सत्य कह रहे हैं, स्वामिन् ! मुझे युद्ध की चिन्ताओं में सम्भाजी के भविष्य का कभी विचार ही नहीं आया। सचमुच मुझे पहले से ही उसे किसी योग्य गुरु के संरक्षण में दे देना चाहिये था ! आपकी आज्ञा के अनुसार मैं उसे आपके ही श्री चरणों में उपस्थित करता हूँ। **(सम्भाजी को समर्थस्वामी के चरणों में बैठा देते हैं)**

समर्थ स्वामी—शिवा ! धर्म की रक्षा के लिये कभी भी पीछे न रहना। अब हम जाते हैं। फिर कभी भेंट करेंगे।

(सब प्रणाम करते हैं। समर्थस्वामी सम्भाजी को साथ लेकर जाते हैं)

शिवाजी—**(अमात्यों से)** अब आप लोग पूर्व निश्चित स्थानों पर जाइये। सब कार्य सावधानी से हो।

(भूषण के अतिरिक्त सब प्रणाम करके जाते हैं)

शिवाजी—कवि जी ! आप मेरे अभिन्न हैं। मुझे आप

पर पूर्ण विश्वास है; इसीलिए आपको एक भार सौंपने लगा हूँ। औरंगजेब बहुत दूर है, प्रतिदिन नई-नई चालें चलता रहता है। आप यहाँ से चुपचाप चले जाइये। औरंगजेब के दरबारी कवि बन कर वहाँ के सब भेद मेरे पास भिजवाते रहिये। इस प्रकार औरंगजेब की अन्तरंग बातों का मुझे परिचय मिलता रहेगा। आप अत्यन्त योग्य व्यक्ति हैं, इस कार्य की पूरी क्षमता रखते हैं। कहिये, आपकी क्या इच्छा है ?

भूषण—महाराज ! अनुगृहीत हूँ। अवश्य करूँगा। औरंगजेब-सा धूर्त व्यक्ति भी मेरी कविता के आगे शीश झुकाएगा।

शिवाजी—आप ठीक कहते हैं, कवि जी ! तो आज ही जाना चाहिये।

भूषण—जो आज्ञा। (**जाते हैं**)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य तीसरा

(कर्णाटक में शाहजी का महल)

शाहजी—यवनों के अत्याचार से भारतभूमि अत्यन्त पद्दलित हो रही है। जहाँ सुख-शान्ति का साम्राज्य था, वहाँ उत्पीड़न और हाहाकार की ध्वनि सुनाई पड़ती है। जहाँ दूध की नदियाँ बहती थीं, वहाँ रक्त के स्रोत उमड़ रहे हैं। सदाचार और परोपकार के स्थान पर दुराचार और लूट-खसोट की दुन्दुभि बज रही है। पर इस अव्यवस्था में हमारा भी हाथ

है। आर्य कहलाने वाले आत्मप्रशंसी, अकर्मण्य और दुराग्रही भारतीयों का भी दोष है। अपने घर में आग लगी देखकर भी हम हाथ-पर-हाथ रखे बैठे हैं। हमारे कान पर जू तक नहीं रेंगती। एक शिवाजी! आहा! पुत्र शिवाजी ने माता का क्रन्दन सुना है! केवल उसके रक्त में उबाल आया है। हम दास-वृत्ति तुच्छ जीव कहाँ, और वह उदारचेता, महान् वीर और धीर कहाँ! उसकी पितृभक्ति सराहनीय है। उसका देशानुराग धन्य है।

(एक दूत का प्रवेश)

दूत—श्रीमन्! आपके सुपुत्र छत्रपति जी ने विश्वासघाती घोरपड़े को सपरिवार यमलोक पहुँचा दिया।

शाहजी—क्या? धन्य! पुत्र, धन्य! आज तुमने मेरे मन को शीतल किया। चिरकाल से लगी हुई यह आग आज शान्त हुई। अब मैं अवश्य पुत्र से मिलूगा। **(तैयार होकर मिलने के लिये चल पड़ते हैं)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य चौथा

समय—**रात्रि**। स्थान—**पूना**।

(नगर-द्वार-रक्षकों को आज्ञापत्र दिखाकर पूना में एक बरात प्रवेश कर रही है। आगे-आगे बाजा बज रहा है। नगर के गृहों के छज्जों से स्त्रियां, बालक, युवक और वृद्ध सब बरात को देखते

हैं। बरात के राजमहल के नीचे पहुँचने पर शाइस्ताखां की स्त्रियां झरोखों में से देखती हैं।)

एक मुगलानी—देख री, दुल्हा ने कैसे अच्छे कपड़े पहने हुए हैं।

दूसरी मुगलानी—कोई बहुत अच्छे तो नहीं। ऐसे कपड़े तो हमारे दास पहनते हैं। हाँ, बाजा बहुत बढ़िया बज रहा है। यहाँ का बाजा बड़ा अजीब है।

पहली मुगलानी—ये लोग इतनी तेजी से क्यों चल रहे हैं ?

दूसरी मुगलानी—तेजी से न चलें तो क्या ठहर-ठहर कर चलें ! देखती नहीं रात कितनी बीत चुकी है।

पहली—(**भीतर की ओर संकेत करके**) वह मुआ तो पीता ही जा रहा है ! पीने के सिवाय उसे सूझता ही नहीं। मैंने इस तरफ बहुतेरा खींचा, पर वह टस-से-मस नहीं हुआ। लोथ-की-लोथ पड़ी रही।

(**बरात आगे बढ़ जाती है। मुगलानियां भीतर चली जाती हैं। बारात के कुछ लोग चुपके-से महल वाले बाग में छिप जाते हैं। बरात के बाजे का शब्द दूर होता जाता है**

(**थोड़ी देर बाद बाग में**)

शिवाजी—तानाजी ! चुपचाप चले आइये। मालियों के घर उस ओर है।

तानाजी—दस कुल्हाड़ियाँ है। पर्याप्त होंगी ?

शिवाजी—कुछ चिन्ता न करो, तानाजी ! माधोजी ! मावली वीरो ! आज एक विचित्र खेल खेलना है। देखना, खाँ बच कर न निकल जाय। पर, सावधान ! महिलाओं पर आँच न आने पावे। माधोजी ! कमन्द ठीक कर ली।

(**माधोजी कमर से कमन्द निकाल कर ठीक करता है**)

शिवाजी—देखो वीरो ! कुल्हाड़ी की चोट से अधिक ध्वनि न हो और हर-हर महादेव का नाद तब तक न करना जब तक पापी का सहार न हो जाय।

माधोजी—कमन्द तैयार है, महाराज !

शिवाजी—तो इस ओर आओ।

(**सब आगे बढ़ते है**)

शिवाजी—(**ऊपर देख कर**) इधर रसोई है, माधोजी। इस खिड़की पर कमन्द फैको।

माधोजी—जो आज्ञा ! (**कमन्द फैकता है। कमन्द लग जाती है**)

शिवाजी—(**ऊपर चढ़ते हुए**) धीरे-धीरे सब ऊपर आ जाओ।

(**सब ऊपर चढ़ते है। और रसोई को पारकर दूसरे कमरे में जाते है। खटका सुनकर एक बेगम उठ बैठती है**)

बेगम--अरी जरीना। देख तो, कोई है! मुझे तो डर लगता है!

जरीना--तुम इसी प्रकार डरती रहती हो। बिल्ली चूहे पर झपट रही होगी।

(माधो किवाड़ पर कुल्हाड़ी का ऐसा वार करता है कि एक फट्टा टूट कर गिर पड़ता है। बेगम और जरीना चीख मार कर दूसरे कमरे में भागती हैं)

माधोजी--शीघ्रता से आगे बढ़ आइये। शाइस्ताखाँ उस कमरे में होगा।

(शिवाजी और तानाजी दौड़कर तीसरे कमरे में पहुँचते हैं। मावली वीर महल के एक-एक कमरे में घुस जाते हैं। अबुलफतेहखाँ जाग पड़ता है और शाइस्ताखाँ को जगा देता है। शाइस्ताखाँ खिड़की की ओर कूदने लगता है)

शिवाजी—अरे! बच कर कहाँ जाता है? **(कमर में से छुरा निकाल कर फेंकते हैं। शाइस्ताखां की अंगुली कट जाती है और वह खिड़की के दूसरी ओर गिर जाता है। अबुलफतेह खां एक ओर खिसकना चाहता है)**

माधोजी—अरे! खाली हाथ जाता है! यह शिव का प्रसाद तो लेता जा! **(अबुलफतेहखाँ के पेट में छुरा घुसेड़ देता है, वह वही ढेर हो जाता है। शिवाजी और उनके साथी**

शीघ्रता से महल के नीचे आकर शाइस्ताखां को देखते हैं, पर उसका कहीं पता नहीं चलता। तब शिवाजी अपने साथियों के साथ पूना के बाहर जा पहुँचते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य पांचवां

समय—**प्रातः नौ बजे।** स्थान—**दिल्ली**

(औरंगजेब का दरबार लगा है। भूषण कवि का प्रवेश)

भूषण—जहांपनाह ! मैं कवि हूँ। वीररस की इतनी विचित्र कविता करता हूँ कि सुनने वाले का हाथ आप-से-आप मूछों पर पहुँच जाता है। मैने बहुत से देश देखे हैं। आपका यश सुनकर आपके यहाँ आया हूँ। क्या आप सेवा में रखने की कृपा करेंगे ?

औरंगजेब—अवश्य। अगर तुम्हारी कविता सुनकर मेरा हाथ मूछों पर चला गया तो; नहीं तो तुम्हें दण्ड दिया जायगा।

भूषण—स्वीकार है, शाहंशाह।

औरंगजेब—तुम आज दोपहर बाद अपनी कविता सुनाना।

(एक दूत का प्रवेश)

दूत—(**सिर झुकाकर**) जहाँपनाह ! बड़ी दुःखदायी खबर है। पूना के महल में रात के समय शिवाजी आ धमका। जनाब शाइस्ताखां की अंगुली कट गई; बड़ी मुश्किल से जान बची। उनका लड़का अबुलफतेह जान से मारा गया और सबेरे जहांपनाह की कुछ फोज मारी गई। बाकी भाग आई।

औरंगजेब—(**दाँत पीसकर**) बड़ी दर्दनाक खबर है। उस डाकू का इलाज करना होगा। यशवन्तसिंह जी ! आप पचास हजार फौज लेकर आज ही दक्खन को कूच कीजिए।

यशवन्तसिंह—जो आज्ञा। (**जाता है**)

(पट परिवर्तन)

दृश्य छठा

समय—**रात्रि**। स्थान—**सूरत**

(एक ऊँचे गृह में एक सेठ और सेठानी बैठे हैं)

सेठ—रमाबाई ! यदि मैं तुम्हारी सम्मति को ठुकरा देता तो कहीं का न रहता।

सेठानी—महाराज शिवाजी के साथ कितनी सेना थी ?

सेठ—चार हजार सवार थे। सूरत का एक-एक कोना उन्होंने लूट लिया। फिरंगियों की भी दो-चार कोठियाँ लुट गईं। छः दिन तक लूट होती रही। मैं तो तुम्हारे कथनानुसार एक लाख मुद्रा लेकर छत्रपति की सेवा में पहले ही जा पहुँचा था। वे मुझ पर प्रसन्न हो गए और फिर उन्होंने मेरी ओर दृष्टि तक नहीं डाली। तुम्हारे चचा के पास अब फूटी कौड़ी भी नहीं बची। महाराज शिवाजी ने स्वयं एक लाख मुद्रा मांगी थीं। यदि वह दे देता तो ऐसी दुरवस्था क्यों होती ?

सेठानी—पर महाराज शिवाजी तो धर्मात्मा प्रसिद्ध हैं, फिर ऐसा अनर्थ क्यों करते हैं ? शान्त नागरिकों को इस

प्रकार लूटना क्या घोर पाप नहीं ?

सेठ——नहीं, रमा ! उन्होंने तो बड़े-बड़े धनियों को पहले ही सूचना दे दी थी, परन्तु किसी ने भी उनकी बात न सुनी। वे तो एक धर्म-युद्ध लड़ रहे हैं। उसमें हमें स्वयमेव सहायता देनी चाहिये। वे इस रुपये में देश की रक्षा और उसका उद्धार करते हैं। तुम्हारी बात मानकर मैंने सुवर्ण-फल पाया है। अब मैं सदा तुम्हारे कथनानुसार चलूंगा। **(तिजोरी खोलता है)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य सातवां

समय——**दोपहर**। स्थान——**दिल्ली**

(औरंगजेब का दरबार लगा है)

औरंगजेब——**(भूषण से)** कवि जी ! हमें तुम्हारी उस दिन की कविता रह-रह कर याद आती है। सचमुच हमारा हाथ आप-से-आप मूछों पर पहुँच गया। हमने तो अपनी ओर से हाथ रोकने की बहुत कोशिश की। गजब है ! तुम्हारी कविता की ताकत बहुत बढ़ी-चढ़ी है।

भूषण——यदि आज्ञा हो तो आज भी एक कविता सुनाऊँ।

(एक दूत का प्रवेश)

दूत——**(सिर झुकाकर)** जहांपनाह ! मुझे जनाब शाइस्ता-खां ने भेजा है। वे अहमदनगर में हैं। उन्होंने कहा है कि यशवन्तसिंह शिवाजी से मिल गए हैं और युद्ध बिलकुल नहीं

कर रहे । शिवाजी ने मुगल राज्य के कई स्थानों पर कब्जा कर लिया है और कई स्थानों से चौथ और सरदेश-मुखी भी लेनी शुरू करदी है ।

औरंगजेग—(**बड़े गुस्से से हाथ-पर-हाथ मार कर**) अच्छा यशवन्तसिंह की इतनी मजाल ! उन्हें वापिस आना होगा और दक्खन में दिलेरखां और मिरजा जयसिंह जी जायंगे । मुगल राज्य पर शिवाजी का कब्जा ! अनहोनी बात है । कवि जी ! इस समय दिल उदास है । तुम्हारी कविता फिर सुनेगे ।

(पट-परिवर्तन)

दृश्य आठवां

समय—**रात्रि**। स्थान—**अहमदनगर**

(मार्ग में एक वृक्ष के नीचे माधोजी और नेताजी घोड़ों की काठियाँ सिर के नीचे रख कर लेटे हुए है)

माधोजी—नेताजी ! हमारे महाराज बड़े सहृदय हैं । उस दिन अपने पूज्य पिता शाहजी का आगमन सुनकर स्वागत के लिए एक कोस तक आगे गये और शाहजी की पालकी में कन्धा लगाकर पैदल घर आए । किले में उन्होंने उनका बहुत ही आदर-सत्कार किया ।

नेताजी—और अब शाहजी की मृत्यु पर उन्हें कितना कष्ट हुआ है ? इस समय अपने पिता की अन्त्येष्टि क्रिया में लगे हुए हैं ?

(कुछ देर बाद)

माधोजी—हमारे समुद्री बेड़े में इस समय कितने सैनिक होंगे ?

नेताजी—चार सहस्र है। क्यों ? समुद्री बेड़े की बागडोर सम्भालने की मन में है क्या ?

माधोजी—नही, यह बात नही। मेरे मन में आता है कि हमारे महाराज सम्पूर्ण भारत को जीत कर अखिल भूमण्डल की विजय के लिये चले। उसके लिये समुद्री सेना की बहुत आवश्यकता है।

नेताजी—(**अचानक उठकर**) माधोजी ! वह देखो, सामने यवनगुप्तचर प्रतीत होता है।

माधोजी—(**उठकर**) अभी इसे पकड़ लाता हूँ (**तेजी से जाता है**)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य नौवां

समय—**प्रातःकाल**। स्थान—**रायगढ़**

(शिवाजी का मन्त्रणाभवन। शिवाजी अकेले बैठे है)

शिवाजी—सम्भाजी श्री समर्थस्वामी के यहाँ से भाग आया है। यह शुभ लक्षण नहीं। तपश्चर्या और सेवा से मुख मोड़ने वाला व्यक्ति कभी भी उच्च नही बन सकता। श्री समर्थस्वामी जैसा आचार्य किसे मिलता है ? उन्होंने कृपा करके इसे स्वयं ही अपने पास रखना चाहा था, परन्तु यह मूर्ख वहाँ से चला आया ! (**कुछ रुककर**) जयसिंह से युद्ध ठीक

नहीं ! भवानीदेवी की आज्ञा है ।

(तानाजी और अभयजी का प्रवेश)

तानाजी——महाराज ! वार्सलावर नगर की लूट का धन कोष में सुरक्षित रख दिया गया है । अष्ट-प्रधान में पण्डित-राव का पद किसे मिलना चाहिये ?

शिवाजी——इसके लिए मोरोजी विशेष उपयुक्त हैं । अमात्यगण से इस सम्बन्ध में आज्ञा ले लेनी चाहिये ।

तानाजी——जो आज्ञा !

शिवाजी——तानाजी ! हमें स्वप्न में भवानी देवी ने कहा है कि 'हिन्दू सेनापति जयसिंह से युद्ध करना ठीक नहीं, तुम इस पर विजय नहीं पा सकोगे ।' तुम्हारी क्या सम्मति है ?

तानाजी——मेरे विचार में तो अब युद्ध से विमुख होना ठीक नहीं । उधर दिलेरखाँ पूर्णधर पर आक्रमण किये हुए है, इस समय सन्धि कर लेने से बुरा प्रभाव पड़ेगा ।

शिवाजी——देवीजी का भी यही विचार है; परन्तु भवानी-देवी की आज्ञा उपेक्षणीय नहीं । उधर पूर्णधर में हमारे वीरों का संहार भी हो रहा है । अतः इस समय तो सन्धि ही ठीक रहेगी । जयसिंह की सेना का नाश हुआ तब भी हिन्दू-वीरों का नाश है और यदि हमारी हानि हुई तब भी वीरों की ही हानि है ।

तानाजी——महाराज ! यही तो सोचकर धूर्त औरंगजेब ने जयसिंह को भेजा है । साथ में जो एक लाख सैनिक हैं, उनमें पचहत्तर सहस्र राजपूत सैनिक हैं ।

शिवाजी—अच्छा, तो फिर यही उचित है। तानाजी ! जयसिंह को एक पत्र तो लिखो। पहले यही प्रयत्न किया जाय। यदि वह मुट्ठी में न आया तो सन्धि कर ली जायगी।

(शिवाजी पत्र लिखवाते हैं; तानाजी लिखते हैं)

शिवाजी—'ऐ सरदारों के सरदार, राजाओं के राजा, भारतरूपी उपवन के माली, ऐ रामचन्द्र के वंशज, तुझसे राजपूतों का मस्तक उन्नत है, तुझसे बाबर के वंश की भी वृद्धि हो रही है, सौभाग्य का तू धनी है। ऐ सौभाग्यशाली वीर ! शिवाजी का प्रणाम और आशीर्वाद स्वीकार कर।'

'मैंने सुना है कि तू मुझ पर आक्रमण करने आया है और दक्षिण की विजय करेगा। हिन्दुओं के हृदय के रक्त से तू संसार के सामने यशस्वी होना चाहता है; पर तुझे यह अनुभव नहीं होता कि यह काम यश का नहीं, अपयश का कारण बनेगा; क्योंकि तेरे इस कार्य से धर्म और देश पर आपत्तियों का पर्वत टूट रहा है।

'यदि तू अपने लिए दक्षिण को जीतने आता तो मेरा सिर तेरे आगे झुक जाता; मेरी आँखें तेरे मार्ग पर बिछ जातीं; पर तू तो प्रवञ्चक और धूर्त औरंगजेब के धोखे में पड़कर आया है। अब मैं यह निश्चय नहीं कर पाता कि तेरे साथ क्या व्यवहार करूँ। यदि मैं तेरे साथ मिल जाऊँ तो यह पुरुषत्व नहीं और यदि मैं तलवार से काम लूँ तो दोनों ओर हिन्दुओं की हानि होती है। तुझे यह उचित नहीं था कि तू हिन्दू-धर्म के रक्षकों से युद्ध करके उन्हें धूल में मिलावे। यदि तुझ में साहस है, तेरे घोड़ों में दम है, तेरी तलवार में

तीक्ष्ण धार है तो तेरे लिए उचित है कि तू धर्म के शत्रु पर आक्रमण कर—यवनों की जड़ को खोद दे ।'

'मुझे पूर्ण आशा है कि तू हिन्दूपन की लाज रखकर धर्मियों का रक्षक और अधर्मियों का संहारकर्ता बनेगा ।' (**कुछ रुककर**) नीचे लिखिये 'तेरे दर्शनों का अभिलाषी, छत्रपति शिवाजी, गौ, हिन्दूजाति और हिन्दू धर्म का रक्षक इति ।' (**तानाजी से पत्र लेकर अभयजी को देते हैं**) देखो अभयजी ! यह पत्र जयसिंह के पास ले जाओ । किसी को तिलमात्र भी पता न चले । पत्र जयसिंह के अतिरिक्त और किसी को न दिया जाय ।

अभयजी—जो आज्ञा । (**जाता है**)

(**पट-परिवर्तन**)

दृश्य दसवां

समय—**प्रातःकाल ।**

स्थान—**दिल्ली में भूषण का गृह ।**

भूषण का भृत्य—(**एक सञ्चिका लेकर उच्च स्वर से पढ़ता है**)

सिव सरजा के वैर को, यह फल आलमगीर ।
छूटै तेरे गढ़ सबै, कूटे गए वजीर ।।

(**पृष्ठ उलटकर**)

टूटि गए गढ़-कोट महा अरु छूटिगे मेड़े जे खांडनि खाँचे ।
कूटे सबै उमराव सिवा अरु लूटिबे को कहूँ देश न बाँचे ।।

भूषण कंचन की चरचा कहा, रंच न हेम खजाननि काँचे ।
झूठे कहावत हे पहिले अब आलमगीर फकीर भे साँचे ॥

(फिर पृष्ठ उलटकर)

एक समै सजिकै सब सैन सिकार को आलमगीर सिधाए,
'आवत है सरजा सम्हरौ' यक ओर ते लोगन बोल जनाए ।
भूषण भो भ्रम औरंगजेब के सिव भौंसला भूप की धाक धुकाए,
धाय के 'सिंह' कह्यौ समुझाय करीलनि आय अचेत उठाए ॥

(भूषण का प्रवेश)

भूषण--(**झटपट सञ्चिका छीनकर**) अरे दुष्ट ! तूने यह सञ्चिका कहाँ से ली । तू बहुत उद्दण्ड है । तू हमें कहीं का न छोड़ेगा ! कोई वस्तु कहीं छिपाकर रखो, वहीं से निकाल लेता है । बड़ा नटखट है ! जा, निकल जा, हमें तेरी आवश्यकता नहीं । (**स्वगत**) इसमें सब प्रकार की कविताएँ लिखी हैं । यह उच्चस्वर से गाने लगा था । (**डांटकर**) जा ! अभी जा ! (**भृत्य को निकाल देते हैं**)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य ग्यारहवां

समय--**प्रातःकाल** । स्थान--**जयसिंह का शिविर**

(दो राजपूत सैनिक बातें कर रहे हैं)

पहला सैनिक--क्यों भाई ! कपड़े क्यों उतर रहे हो ? अस्त्र-शस्त्र क्यों सम्भाल रहे हो ? हमें तो आज प्रातःकाल

से ही सन्नद्ध रहने की आज्ञा है ? क्या तुम युद्ध में न चलोगे ?

दूसरा सैनिक--नहीं, भाई ! अब शिवाजी से युद्ध न होगा। मिरजाजी से उसने सन्धि करली है।

पहला सैनिक--हैं ! सन्धि कर ली है ! सन्धि क्यों कर ली ? शिवाजी तो किसी से भयभीत होने वाला नहीं। क्या हम से डर गया है ?

दूसरा—नहीं, शिवाजी डरता नहीं ! उसके विचार बहुत धार्मिक हैं। वह हिन्दुओं के हाथों हिन्दुओं का संहार देखना नहीं चाहता। हम राजपूत हैं, वे मराठे हैं; दोनों ओर रक्त एक ही है। यही कारण है कि सन्धि करली है।

पहला—सन्धि की शर्तें तो तुम्हें मालूम होंगी ?

दूसरा—क्यों नहीं ? पहली शर्त यह है कि जो भूमि औरंगजेब की सरकार ने इन दिनों छीनी है वह लौटा दी जाय। दूसरी शर्त यह है कि शिवाजी अपने बत्तीस किलों में बीस किले मुगलराज्य को दे देवें और शेष बारह किले अपने पास रखें और जिस किले के साथ जितनी जागीर हो वह उसी के साथ रहे।

पहला—तुम्हें पता है कि बीस किले कौन-कौन से हैं ?

दूसरा--नहीं, मुझे सबका तो नाम स्मरण नहीं; हाँ उनमें सिंहगढ़, रायगढ़ और पूर्णधर किले भी हैं।

पहला—सुनते हैं कि सिंहगढ़ सर्वश्रेष्ठ किला है। यह तो खूब हुई ! और भी कोई शर्त है ?

दूसरा—हाँ ! बता तो रहा हूँ । तीसरी शर्त यह है कि शिवाजी के पुत्र सम्भाजी को पांच सहस्र का पुरस्कार मिले।

पहला—सम्भाजी की आयु कितनी होगी ?

दूसरा—यही लगभग आठ वर्ष । हाँ, तो चौथी शर्त यह है कि शिवाजी को बीजापुर के राज्य में कुछ जागीर का अधिकार प्राप्त हो और शिवाजी तीन लाख 'पगोड़ा' वार्षिक के धनांश से चालीस लाख 'पगोड़ा' शाही कोष में भेंट दें। इसके साथ ही शिवाजी बीजापुर के राज्य पर आक्रमण करने में शाही सेना की सहायता करेंगे और शिवाजी को दक्षिण की सूबेदारी दी जायगी । सम्भवतः आज बीजापुर के रुद्रमण्डल दुर्ग पर आक्रमण किया जायगा ।

पहला—तब तो हमें सुसज्जित रहना चाहिये ?

(तीसरे सैनिक का प्रवेश)

तीसरा सैनिक—नहीं, उसकी आवश्यकता नहीं रही । आज कोई भी आक्रमण न होगा । बीजापुर के जिस रुद्रमण्डल किले को हमारी सेना छू तक न सकी थी, उसे ही पिछली रात्रि को शिवाजी ने जीत लिया है ।

पहला सैनिक—**(आश्चर्यचकित होकर)** हैं ! रुद्रमण्डल जीत लिया ! वह कैसे ! उस किले की चढ़ाई तो बिलकुल सीधी थी और बीजापुर की सारी शक्ति उसकी रक्षा में लगी हुई थी ।

तीसरा सैनिक—अरे भाई ! शिवाजी बहुत साहसी हैं।

आधी रात के समय तीन सौ सैनिक लेकर चुपचाप किले पर जा चढ़े। मार्ग में जो भी आया उसे ही समाप्त कर दिया और 'हर हर महादेव' के नाद से सारे रुद्रमण्डल को कंपाते हुए शत्रुओं को यमलोक पहुँचा दिया। श्री मिरजा जयसिंह-जी इस विजय से शिवाजी पर बहुत प्रसन्न हुए हैं। शिवाजी का चरित्र तो बहुत ही पवित्र है ! उन्होंने शत्रुओं की बेगमों को उनके सम्बन्धियों के पास सुरक्षित पहुँचा दिया। धन्य ! शिवा-जी ! धन्य !!

पहला सैनिक—तो क्या अब हमें वापिस लौटना होगा ?

तीसरा सैनिक—नहीं, हमें अभी यहीं ठहरना है। महा-राज जयसिंह जी के सुपुत्र रामसिंहजी शिवाजी के साथ दिल्ली जाएँगे।

(पहले दोनों सैनिक विस्मित रह जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य बारहवां

समय—**दोपहर** । स्थान—**प्रतापगढ़**

(शिवाजी का दरबार लगा है। शिवाजी, तानाजी, नेताजी, आबाजी, अभयजी, माधोजी, मोरोजी, शेलार मामा, रघुनाथजी और प्रतापराव गुर्जर आदि बैठे हैं। शिवाजी के पास ही सम्भाजी बैठे हैं)

शिवाजी—अच्छा हो या बुरा, लाभ हो या हानि। आज

मैं और सम्भाजी रामसिंह के साथ दिल्ली जाते हैं। तानाजी, नेताजी, माधोजी और दो सौ अनुभवी सैनिक हमारे साथ होंगे। जयसिंह ने पूर्ण विश्वास दिलाया है। यद्यपि आपमें से अधिक की यही सम्मति थी कि हम युद्ध करते; किन्तु युद्ध से दोनों ओर हिन्दू वीरों का संहार होता, यही सोच कर मैंने सन्धि कर ली है। आप सब बुद्धिमान हैं, धीर हैं, शौर्य के पुञ्ज हैं। आपको कुछ कहना सूर्य को दीपक दिखाना है। अष्टप्रधान के कार्य में किसी प्रकार भी बाधा नहीं आनी चाहिए। गाँवों की पंचायतों को नियम से चलाते रहिये। गुप्तचर विभाग में एक सहस्र वीर और बढ़ा दो। शेलार मामाजी! आबाजी! प्रतापगढ़ की रक्षा करना, माताजी ओर देवीजी आपकी देख-रेख में रहेगी। प्रतापरावजी सेना की उन्नति प्रवर्द्धन में पहले से भी अधिक उत्साह दिखायंगे। सैनिकों को वेतन समय पर मिलता रहे और कर प्राप्त करने में किसी प्रकार भी शिथिलता न आने पाय। बन्धुवर! आप लोग मेरे अंग हैं, मेरी भुजाएँ हैं, मेरा हृदय हैं, मेरी आत्मा हैं। आपका वियोग मुझे असह्य है, पर कर्त्तव्य-पालन के लिये सब कुछ सहना पड़ता है। यदि मैं अपने कार्य में सफल होकर आगया तब तो आपके दर्शन करूँगा, अन्यथा जैसी ईश्वरेच्छा। भाइयो! अपने देश का उद्धार करने में सदा दत्तचित्त रहना। धर्म की रक्षा से कभी भी विमुख न होना। अच्छा, नमस्कार।

(शिवाजी, सम्भाजी, तानाजी, नेताजी, माधोजी जाते है)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य तेरहवां

समय—**प्रातःकाल** । स्थान—**दिल्ली** ।

(औरंगजेब का महल । औरंगजेब मोती और मणियों के आभूषण पहन रहा है)

औरंगजेब—अब चिन्ता मिटी । मैंने अनेक हिन्दू और मुसलमान राज्यों पर अधिकार कर लिया है । बड़े-बड़े राजपूत मुझे सिर झुकाते हैं । जयसिंह जैसे रण-कुशल वीर मेरी मुट्ठी में हैं । केवल इसी ने नाक में दम कर रखा था । इसने मेरे देखते-देखते एक बहुत बड़े हिन्दू राज्य की नींव डाल ली; मुझे डूब मरना चाहिए था । पर अब कलेजा ठण्डा हो जायगा । अब यह बचकर नहीं जा सकता । इसके पुत्र का भी काम तमाम कर दूंगा । **(कुछ रुककर)** पर जयसिंह को क्या मुँह दिखाऊँगा । वह बड़े रोबवाला राजपूत है **(कुछ सोचकर)** हूँ ! उसे भी समझ लूंगा, अभी कुछ दिन इसे कुछ न कहूँगा । पीछे किसी बहाने से पिता पुत्र-दोनों का सिर काट लूंगा । आज मुगलिया-शान देखकर इसकी आँखें चुंधिया जायँगी ।

(बड़बड़ाता हुआ दूसरे कमरे में जाता है)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य चौदहवां

समय—**दोपहर** । स्थान—**दिल्ली के बाहर** ।

(शिवाजी, सम्भाजी, नेताजी, माधोजी और दो सौ

मरहठे वीर आ रहे हैं । भूषण कवि सामने से आते हैं । शिवाजी और भूषण गले मिलते हैं)

भूपण--(**नेताजी और माधोजी का अभिवादन स्वीकार करके, शिवाजी से**) महाराज ! मैंने तो आपको पत्र भिजवाया था कि आप किसी प्रकार भी दिल्ली न आइएगा !

शिवाजी—कवि जी ! आपका पत्र मुझे नहीं मिला । सम्भव है पत्र-वाहक हमारे चले आने के पश्चात् वहाँ पहुँचा हो । अच्छा, कुछ भय नहीं, अब आये हैं, औरंगजेब का रंग-ढंग देखकर ही जायेंगे ।

भूपण--औरंगजेब बहुत नीच प्रकृति का शासक है, महाराज ! वह आपको धोखा देगा । आपका जीवन संकट में पड़ जायगा । वह जयसिंह को भी धोखा दे डालेगा ।

शिवाजी--नहीं कविजी ! अब न रोको । अब तो इससे भेंट कर लेनी ही उचित है ।

भूषण—जैसी आपकी इच्छा । तो सावधान रहियेगा !

शिवाजी—बहुत अच्छा, कवि जी !

(**सब चलते हैं**)

(**पट परिवर्तन**)

दृश्य पन्द्रहवां

समय--**दोपहर** । स्थान--**दिल्ली** ।

(**औरंगजेब का दरबार लगा है । चारों ओर सशस्त्र पहरेदार खड़े हैं । दरबार बहुत अधिक सजाया गया है**)

औरंगजेब––हम हिन्दोस्तान के शाहंशाह, वह एक छोटा-सा जागीरदार, भला हमारा मुकाबला कैसे कर सकता है ? अच्छा है, सन्धि हो गई ।

मीरजुमला––आप ठीक कहते हैं, जहांपनाह ! जोहड़ की और समुद्र की क्या बराबरी ! हः हः हः ! पर शाहंशाह ! वह है बड़ा निडर ।

(शिवाजी, सम्भाजी, तानाजी और माधोजी का प्रवेश । औरंगजेब शिवाजी का कुछ भी आदर नहीं करता)

औरंगजेब––(**पंचहजारी लोगों की ओर दिखाकर शिवाजी से**) तुम वहाँ बैठो । वह जगह तुम्हारे लिए है ।

शिवाजी––(**क्रुद्ध होकर**) क्या यही सन्धि है ? क्या यही बराबरी है ? क्या यही दक्षिण की सूबेदारी है ? हमें पंचहजारी दरबारियों के समान समझा गया है ? धोखा है ! प्रवञ्चना है ! भुलावा है । इन बीस हजारियों में से कोई हमारी तुलना कर सकता है तो जरा सामने आवे ! हम भी देखें कि उसमें कितनी शक्ति है ! उसकी तलवार में कितना सामर्थ्य है ! हे मुगलों के कलंक ! क्या तू समझता है कि इस प्रकार हमारा अपमान करेगा ? तू नहीं जानता कि मेरा छुरा तेरे रक्त का प्यासा है ? (**छुरा निकाल लेते हैं । औरंगजेब मीरजुमला तथा अन्य दरबारी कांप जाते हैं । औरंगजेब मुस्कराने लगता है । शिवाजी अपने साथियों सहित बाहर निकल जाते हैं । औरंगजेब का संकेत पाकर बहुत से सैनिक उनकी ओर दौड़ते हैं ।**)

(पट-परिवर्तन)

षष्ठ अंक

दृश्य पहला

समय—**प्रातःकाल** । स्थान—**दिल्ली** ।

(शिवाजी का निवास-स्थान । शिवाजी एक खाट पर लेटे हैं । सामने सम्भाजी बैठा है)

शिवाजी—(**स्वगत**) दुर्गम कानन का केसरी नगर की भूल-भुलैयाँ में आ फँसा । मानो प्रचण्डांशु सूर्य के आगे मेघों का आवरण छा गया हो । जिसने आज तक किसी से कभी भी धोखा न खाया था, वह इस यवन के पाश में कैसे बँध गया ! मुझे स्वयं अपने पर आश्चर्य होता है ! सच है, धर्मपत्नी की सम्मति को ठुकराने वाले कभी भी सुख नहीं पाते । तानाजी और भूषण का कथन भी मैंने सुना-अनसुना कर दिया । स्वप्न के अन्धविश्वास ने मुझे विपथ में डाल दिया । जयसिंह की मीठी-मीठी बातों का परिणाम हलाहल निकला । इस घृणित जीवन से तो वहाँ शत्रु पर टूट पड़ना ही श्रेयस्कर था । अच्छा, कुछ भय नहीं । किसी प्रकार इस बन्धन से मुक्त हो जाऊँ तो इस रंगे सियार का सारा रंग उतार दूँ । तानाजी अभी तक नहीं आए ! एक मास से रुग्ण बना हुआ हूँ । पाँच दिन से आराम का बहाना बना कर मन्दिरों और मस्जिदों में मिठाई भेज रहा हूँ । आज बड़ी मिठाई की

बारी है ।

(तानाजी का प्रवेश)

तानाजी---(**धीरेसे**) अश्व तैयार हैं । जाइये, आज टोकरी में मिठाई बन जाइये । एक में आप, दूसरी में सम्भाजी शेष सब ठीक-ठाक है ।

शिवाजी---तो आप यहाँ ठहरेंगे ?

तानाजी---जी हाँ, शीघ्रता कीजिए और अपने वस्त्र मुझे उतार दीजिए ।

(शिवाजी अपने वस्त्र तानाजी को देते हैं और स्वयं तानाजी के पहन लेते हैं)

तानाजी---(**एक टोकरी में शिवाजी को और एक में सम्भाजी को बैठाकर स्वयं करवट से शिवाजी की शय्या पर लेटकर शिवाजी की ध्वनि**) पहरेदार ! बोझा ढोनेवालों को बुलाकर यह मिठाई मन्दिरों और मस्जिदों में भिजवा दो ।

पहरेदार---जो आज्ञा (**बाहर जाकर बोझा उठाने वालों को बुलाता है । दस व्यक्ति दौड़कर आते हैं । पहरेदार उन्हें भीतर लाता है**)

पहरेदार---देखो, ये मिठाई के टोकरे मन्दिरों और मस्जिदों में पहुँचा आओ । मजदूरी आकर यहाँ से लेना ।

बोझा ढोने वाले---बहुत अच्छा, हजूर !

(टोकरियाँ उठाकर जाते हैं । पहरेदार भी जाता है । बोझा ढोनेवाले नगर से बाहर जाते हैं और एक स्थान पर

पहुँचकर टोकरियाँ रखते हैं और टोकरियों के मुँह खोल देते हैं। शिवाजी और सम्भाजी बाहर निकलते हैं)

शिवाजी—माधोजी ! ठीक है; पर तानाजी की चिन्ता है। आप कल तक यह मार्ग रोके रखें। हम निकल जाएंगे। कितने वीर प्रस्तुत हैं ? तानाजी को साथ ही लेकर आना।

माधोजी—इस समय पाँच सौ वीर तैयार हैं। आप निश्चिन्त होकर बनारस होते हुए दक्षिण पहुँचिये। यह लीजिये साधुओं का पहरावा।

(शिवाजी और सम्भाजी साधुओं का वेश धारण करके जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य दूसरा

समय—**दोपहर।** स्थान—**दिल्ली।**

(औरंगजेब का दरबार। औरंगजेब माला फेर रहा है। दरबारी धीरे-धीरे आपस में बातें कर रहे हैं)

औरंगजेब—**(स्वगत)** शिवाजी का शासन-प्रबन्ध कितना अच्छा है ! इतने दिनों से यहाँ कैद है, फिर भी वहाँ कुछ कमी नहीं आई। एड़ी-चोटी का पसीना एक करने पर भी हमारी फौजें उसके राज्य पर अधिकार नहीं कर सकीं। शिवाजी के यहाँ आने से पहले जितने किले हमारे अधिकार में आए थे, उससे अधिक एक भी हमारे हाथ में नहीं आ सका। जयसिंह मर चुका है। एक काँटा तो दूर हो गया। अब दूसरे

काँटे को भी दूर कर देना चाहिये ।

(**एक दारोगा का प्रवेश**)

दारोगा—(**डरते डरते**) जहाँपनाह ! शिवाजी धोखे से निकल भागा ।

औरंगजेब—(**बहुत अधिक घबराकर**) हैं ! शिवाजी भाग गया ! कैसे ? क्या तुम सब जहन्नुम में गये हुए थे !

दारोगा—परवरदिगार ! वह मिठाई के टोकरे में बैठकर निकल गया ।

औरंगजेब—(**दिल पर हाथ रखकर**) आह ! मेरी सारी कोशिश बेकार गई ! मैने पहले ही उसका सिर क्यों न काट लिया ? हाथ में आया हुआ शिकार यों ही क्यों जाने दिया ? मेरी अक्ल पर पत्थर क्यों पड़ गए ? तुम्हें पूरी सजा मिलेगी। हाय हाय ! (**दाँत पीसकर**) वह फिर हाथ न आयगा ! मेरा दिल धड़कता है ! जाओ, जाओ ! मीरजुमला को जल्दी भेज दो ! दक्खन की ओर फौज दौड़ा दो ! सब चौकियों पर खबर भिजवा दो ! उसे देखते ही मार डालो ! उफ् ! कितनी गर्मी है ! सिर फटा जा रहा है ! शिवाजी हाथ में था ! अब उसे कैसे पकड़ सकूँगा ! ओह ! कलेजा टूक-टूक हो रहा है। (**अचेत हो जाता है। दारोगा और भृत्य उपचार के लिये दौड़ते हैं**)

(पट-परिवर्तन)

सप्तम अंक

दृश्य पहला

समय—**सायंकाल** । स्थान—**प्रतापगढ़**

(शिवाजी का मन्त्रणाभवन । शिवाजी, सम्भाजी, मोरोजी, शेलार मामा, माधोजी, सूर्यजी और तानाजी बैठे हैं)

शिवाजी—दिल्ली से आने के पश्चात् हमने प्रायः अपने सम्पूर्ण दुर्गों पर पुनः अधिकार कर लिया है; परन्तु सिंहगढ़ मुगलों के ही हाथ में है । मुगल-राज्य की ओर से उसमें उदयभानु बड़ी सतर्क दृष्टि से रहता है । उसके पास सेना भी पर्याप्त है और उसके रक्षक भी सावधान हैं । सिंहगढ़ मैंने स्वयं बनवाया था । शेलार मामा जी उसमें वर्षों तक रहे हैं । सिंहगढ़ प्राप्त किये बिना मुझे शांति नहीं मिलेगी । पर क्या किया जाय ? सारी सेना प्रतापरावजी, और अभयजी के संरक्षण में 'चाकन' और 'सहारा' में दिलेरखां और शाइस्ताखाँ से लड़ रही है ।

सूर्यजी—माताजी की भी यही आज्ञा है कि राज्य की उन्नति के लिये सिंहगढ़ को शीघ्रातिशीघ्र जीत लो ।

(एक गुप्तचर का प्रवेश)

गुप्तचर—(**प्रणाम करके**) महाराज ! यह पत्र है । **(पत्र तानाजी को देता है)**

तानाजी—(**पत्र पढ़कर**) महाराज ! कविजी प्रणाम के अनन्तर लिखते हैं कि औरंगजेब का पुत्र मुअज्जम पिता से लड़कर दक्षिण आ रहा है। पर यह सब धोखा है, औरंगजेब की एक चाल है। महाराज सावधान रहें और मुअज्जम से कभी भी भेंट न करें।

शिवाजी—एक बार धोखा खा चुका हूँ। अब फंदे में नहीं आ सकता। कविजी ने समय पर सूचित किया। तो, सिंहगढ़ को विजय करने का भार कौन अपने कन्धों पर लेने की उद्यत है ?

तानाजी—(**उठकर**) महाराज ! इस सेवा के लिए यह सेवक उपस्थित है।

शिवाजी—नही, तानाजी ! आपको अभी कुछ विश्राम करना चाहिए। दिल्ली से बड़ी कठिनता से मार-काट मचाते हुए बचकर आए हो। सितारा, पनाला और रायगढ़ को विजय करते समय भी आप मेरे साथ-साथ थे। बहुत थक चुके हो।

नेताजी—हाँ, तानाजी ! सेवा का यह अवसर मुझे दे दीजिए। महाराज ठीक कहते हैं। आपने बहुत दिनों से आराम नहीं किया।

तानाजी—आपका कथन सत्य है; परन्तु मैं आज माता-जी के सम्मुख प्रण कर आया हूँ कि जब तक सिंहगढ़ को विजय न कर लूंगा, तब तक भोजन न करूंगा।

शेलार मामा—तुमसे कौन पार पा सकता है, पुत्र ! अच्छा, यों ही सही। मैं, सूर्य जी, माधोजी तुम्हारे साथ

होंगे; पर तुमने भोजन का प्रण ठीक नही नहीं किया।

तानाजी—मामाजी ! पाँच सौ मावलियों को लेकर सिहगढ़ के इस ओर जंगल में चुपचाप पहुँचिये, तब तक मैं वहाँ का रहस्य ले लू । **(प्रणाम करके जाते है)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य दूसरा

समय—**रात्रि** । स्थान—**सिहगढ़ का मुख्य-द्वार**

(दो पहरेदार घूम रहे हैं)

पहला पहरेदार—**(घूमता हुआ)** दिल्ली से आज्ञा आई है कि सिहगढ़ किसी प्रकार भी शत्रु के हाथ में न जाने पावे ।

दूसरा पहरेदार—दुर्गाध्यक्ष भी आजकल बहुत कठोरता का व्यवहार कर रहे हैं।

(थोड़ी दूर पर प्रकाश होता है)

पहला पहरेदार—हैं ! यह प्रकाश कैसा है ?

दूसरा पहरेदार—कुछ भी नहीं ! जुगनू चमक रहे हैं ।

(दूसरी ओर 'में में' का शब्द सुनाई देता है)

पहला पहरेदार—यह कैसी बला आ पड़ी ! दुर्गाध्यक्ष आज फिर परीक्षा के लिए आए दिखाई पड़ते हैं !

('रक्षा करो' 'रक्षा करो' का शब्द सुनाई पढ़ता है । दोनों पहरेदार उधर दौड़ते हैं । दूसरी ओर से तानाजी द्वार के भीतर जाते हैं और थोड़ी देर में लौट आते हैं । इतने में दोनों पहरेदार भी आ जाते हैं)

पहला पहरेदार--कोई भी नहीं। कोई यों ही तंग कर रहा है।

(**घण्टा बजता है**)

दोनों--(**द्वार बन्द करते हुए**) चलो, कुछ तो चिन्ता मिटी।

(सिंहगढ़ के पास जंगल में पाँच सौ वीरों के साथ शेलार मामा और माधोजी खड़े कुछ बातचीत कर रहे हैं। थोड़ी देर बाद तानाजी का प्रवेश)

तानाजी—मामाजी ! मैं सुरक्षित स्थान देख आया हूँ। मुख्य द्वार सम्भवतः इस समय बन्द हो गया होगा। तीन सौ सैनिक लेकर यहीं ठहरिये। हर हर महादेव की ध्वनि के साथ मुख्य द्वार खोल दिया जायगा। मैं दो सौ सैनिक लेकर चलता हूँ।

(तानाजी जाते हैं और मुख्यद्वार से पचास गज की दूरी पर ठहरकर रस्सी फेंकते हैं। कमन्द लग जाती है)

तानाजी--भाइयो ! देखें तुममें से कौन सच्चा शूरवीर है ! पहले इस रस्सी पर कौन चढ़ता है। (**सब चुप खड़े रहते हैं**)

तानाजी--कायरो ! क्या इसी साहस को लेकर मेरे साथ आय हो ? महाराज को अपना काला मुख किस प्रकार दिखलाओगे ? यदि डर लगता है तो घरों में जाकर लहंगे और चूड़ियाँ पहन कर पड़े रहो। छिः ! तुम्हारी (**सब-के-सब रस्सीपर चढ़ने लगते हैं, रस्सी टूट जाती है। सब-के-सब पृथ्वी**

पर गिर पड़ते है। पहरेदार तेजी से आते है। तानाजी एक तीर मारकर उसे गिरा देते है)

तानाजी--(**सैनिकों से**) खेद है ! तुम्हारी अज्ञता पर। यह रस्सी नही टूटी, अपितु हमारे जीवन की लड़ी टूट गई है। वीरो ! तुम्हे क्या हो गया ? आओ, अनुशासन में रहकर युद्ध करो। (**फिर रस्सी फेंकते है। तब पहले तानाजी और फिर क्रमशः सब ऊपर चढ़ते है। बीस दीवार के रक्षक उनकी ओर झपटते है। परन्तु तानाजी उन सब को काट डालते है)**

तानाजी—वीरो ! साहस से काम लो ! सिहगढ अभी-अभी हमारे हाथ आजायगा। आओ, शीघ्रता से कूद पडो। (**तानाजी भीतर कूदते है। सैनिक भी कूदते है। घमासान युद्ध आरम्भ हो जाता है। तानाजी लड़ते-लड़ते मुख्यद्वार की ओर जाते है। और द्वार खोल देते है। 'हर हर महादेव' की ध्वनि होती है।)**

तानाजी—(**लड़ते-लड़ते**) धन्य ! वीरो ! देखना कोई शत्रु बचने न पाय। (**उदयभानु के लड़के आते है। तानाजी उन्हें मार गिराते है। उदयभानु का मतवाला हाथी आता है। तानाजी झपटकर एक ही वार मे उसकी सूड काट देते है। हाथी चिघाड़ता हुआ भाग जाता है। तब उदयभानु घोड़े पर चढ़ कर आता है। लड़ते-लड़ते अकस्मात तानाजी की तलवार टूट जाती है। तानाजी थोड़ी देर तक टूटी तलवार से लड़ते रहते है। अन्त मे उदयभानु की तलवार से तानाजी की मृत्यु**

हो जाती है)

उदयभानु—मारा गया ! अब उसका एक भी सैनिक जीवित न लौटेगा ! (**तानाजी के सैनिक भागने लगते हैं ।**)

(शेलार मामा, सूर्यजी और माधोजी ३०० सैनिकों सहित 'हर हर महादेव' करते हुए आते हैं ।)

शेलार मामा—कायरो ! स्वामी को गँवाकर अब भाग रहे हो ! लज्जा नहीं आती ! तुमने क्या माँ का दूध नहीं पिया ? माधोजी ! देखो, जो भागना चाहे उसका सिर काट लिया जाय ।

माधोजी—कौन भागकर जा सकता है ? क्या मेरी तलवार नहीं देखी ? यदि बचकर भाग भी गया तो उसे महाराज से प्राणदण्ड दिलवाकर छोड़ूगा । अरे ! वीरो ! पुरुष हो या मच्छर ! गीदड़ों की भान्ति क्यों भागते हो ? देखो तो सही, तुम्हारी खड्ग में कितना बल है ! मत डरो, आज की विजय का यश तुम्हें ही मिलेगा । आओ, मिलकर आक्रमण कर दो । हर-हर महादेव !

(सब हर हर महादेव का नाद कर लौट पड़ते हैं और शत्रु पर टूट पड़ते हैं)

शेलार मामा—(**उदयभानु से**) ओ हिन्दुत्व को कलंकित करने वाले कमीने ! यवनों की जूठन खाते हुए तुझे लज्जा नहीं आती ? तानाजी मर गए तो क्या सारा महाराष्ट्र शून्य हो गया ? आज अस्सी वर्ष के बूढ़े का भी हाथ देख ।

(अत्यन्त क्रुद्ध होकर उदयभानु पर टूट पड़ते हैं। बड़े भयानक युद्ध के बाद शेलार मामा की तलवार उदयभानु को काट गिराती है। दूसरी ओर माधोजी उदयभानु के सेनानियों को मार गिराते हैं। उदयभानु के शेष सैनिक कैद कर लिये जाते हैं। सूर्यजी किले की दीवार पर जाकर तोपें दागते हैं।)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य तीसरा

समय—**रात्रि।** स्थान—**प्रतापगढ़ में शिवाजी का निवास-गृह**

(शिवाजी माता जीजाबाई से कुछ मन्त्रणा कर रहे हैं)

शिवाजी—**(तोप का शब्द सुनकर प्रसन्न होते हुए)** अवश्य ही तानाजी ने सिंहगढ़ पर विजय प्राप्त करली है!

(माधोजी का प्रवेश)

माधोजी—**(उदास भाव से)** महाराज! तानाजी के साहस से सिंहगढ़ जीत लिया गया; परन्तु······**(गला रुंध जाता है)**

शिवाजी—'परन्तु' क्या? माधोजी।

माधोजी—महाराज! तानाजी ने अपनी पूर्णाहुति दे दी।

शिवाजी—**(रोकर)** हाय! तानाजी! आप मेरे प्राण थे,

सिंहगढ़ लेकर मैं क्या करूंगा ? हा ! गढ़ आया पर सिंह गया ! हा शोक ! महा शोक ! **(रोते हैं। जीजाबाई समझाती हैं)**

(पट-परिवर्तन)

दृश्य चौथा

समय—**दोपहर** । स्थान—**औरंगजेब का दरबार**

औरंगजेब—**(माला जपते जपते)** शिवाजी क्या चला गया हमारा राज्य ही चला गया । हमेशा यही खबर आती है शिवाजी ने आज यह किला ले लिया कल वह ले लिया । मुअज्जम को भेजा···**(खाँसकर)** मुअज्जम भी हमसे लड़कर चला गया । उधर दिलेरखाँ और इखलासखाँ भी मार खा रहे हैं । कई सालों से दक्खन को जीतने की चाह है, पर पूरी होती दिखाई नहीं देती । रात को सुपने आते हैं । **(आखें फाड़कर)** वह सामने शिवाजी का छुरा मेरी ओर आ रहा है ! **(आंखें मलकर)** नहीं, जिन्दगी का कच्चा चिट्ठा आँखों के आगे नाच रहा है ! शिवाजी की लाल-लाल आँखें ! उफ् ! क्या करूँ, कहाँ जाऊँ ? **(कुछ स्वस्थ होकर)** आज तबीयत बहुत उदास है ! ओ ! कवि ! तू भी ठीक कविता नहीं सुनाता ! हमेशा शिवाजी की बड़ाई गाया करता है ।

भूषण—**(क्रुद्ध होकर)** आज आप को क्या हो गया है ? इतनी असभ्यता से तो आप कभी नहीं बोले । **(कुछ सोचकर)**

महाराज शिवाजी की बडाई न सुनाऊँ तो क्या आपकी बड़ाई सुनाऊँ ?

सुनिये—किबले के ठौर बाप बादसाह साहजहाँ,
वाको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है।
बडो भाई दारा वाको पकरि के मारि डार्यो,
मेहरहू नाहि माको जायो सगो भाई है॥
बन्धु तो मुरादबक्स वादि चूक करिबे को,
बीच दै कुरान खुदा की कसम खाई है॥
'भूषण' सुकवि कहै सुनो नवरगजेब,
एते काम कीन्हे फेरि पातसाही पाई है॥

औरगजेब—**(आवेश मे आकर)** बस बस मुहफट ! तुझे अपनी जान का डर नही ? तू नही जानता कि किसके सामने ऐसी बात कर रहा है ! जा, चला जा, मुझे तेरी जरूरत नही।

(भूषण जाने लगता है)

औरगजेब—कहा जायगा ? ओ कवि ! सुनता नही !

भूषण—छत्रपति महाराज सरजा शिवाजी के पास जाऊँगा।

औरगजेब—पकड लो इस बागी को।

(पहरेदार झपटते हैं। भूषण तलवार घुमाते हुए निकल जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

दृश्य पांचवां

(प्रतापगढ़ में जीजाबाई और सूईबाई बैठी हैं)

जीजाबाई—आज मेरी अभिलाषा पूर्ण होगी; आज हिन्दू-वीरों की साध चरितार्थ होगी; आज आर्यों की मनचाही होगी। इसी दिवस की प्रतीक्षा में थी, इसी उत्सव की घड़ियाँ गिन रही थी। वीर पुत्र ने मेरी आज्ञा मान ली; अपना राज्याभिषेक करना स्वीकार कर लिया। अपने इन नेत्रों के सामने तिलक देख सकूगी ! हृदय आनन्द-पयोधि में मग्न हो रहा है। बेटी ! वह दिन याद है जिस दिन मैंने और तुमने 'सरजा' का तिलक किया था और कहा था कि तुम 'महाराष्ट्र-केसरी' बनो। प्रभु ने हमारी प्रार्थना सुन ली। हृदय ! यह तेरा सौभाग्य है, मेरा सौभाग्य है, सूईबाई का सौभाग्य है, भारतवर्ष का सौभाग्य है, गौ और द्विजमात्र का सौभाग्य है !

सूईबाई—यह सब आपकी सुशिक्षा का, आपके प्रोत्साहन का परिणाम है, माताजी ! संघर्ष बड़ा भीषण था, आँधी बहुत प्रचण्ड थी; परन्तु उन्होंने परमात्मा की दया से, आपके अनुग्रह से, सब पर विजय पाई। इस शुभ घड़ी में मैं दीनों को सुवर्ण दान दूगी।

(शिवाजी का प्रवेश)

शिवाजी—श्री समर्थ स्वामी अपने प्रमुख शिष्यों सहित मण्डप के पवित्र आसन पर सुशोभित हैं, माताजी ! कविजी अभी तक नहीं आए। काशी के विद्वान् ब्राह्मण आ चुके हैं। कल्याण से आबाजी भी आगये हैं ! आप दोनों शीघ्र चलें।

(जीजाबाई, शिवाजी और सूईबाई तीनों जाते हैं)

(पट-परिवर्तन)

छठा दृश्य

स्थान—अभिषेक का मण्डप

(बड़ा भारी दरबार सजा है। एक ऊंचे आसन पर समर्थ स्वामी बैठे हैं और पास ही काशी से आए हुए विद्वान् बैठे हैं। एक ओर सम्भाजी, आबाजी, माधोजी, अभयजी, शेलार मामा, मोरोजी, रघुनाथजी, रघुबल्लाल और नेताजी पालकर आदि यथास्थान बैठे हैं। दूसरी ओर नागरिक, ग्रामीण और साधु-सन्त, नायक आदि बैठे हैं। जीजाबाई और सूईबाई सहित शिवाजी का प्रवेश। बाजे बजते हैं। छत्रपति शिवाजी की जय का नाद होता है। समर्थ स्वामी को छोड़कर सब उठते हैं। आबाजी नमस्कार करके महाराज को स्वर्ण-सिंहासन पर बैठाते हैं। उनके बाईं ओर सूईबाई और दाईं ओर जीजाबाई बैठती हैं। शेलार मामा शिवाजीको मुकुट पहनाते हैं)

समर्थ स्वामी—(आगे आकर और तिलक करके) जैसे लंका से लौटने पर श्रीरामचन्द्र जी का अभिषेक हुआ था, उसी प्रकार आज शुभ विक्रम संवत् १७३१ को शिवाजी का यह अभिषेक होता है। छत्रपति शिवाजी महाराज का राज्य रामराज्य सिद्ध हो, असुरों का सर्वनाश और देवों की विजय हो।

जीजाबाई—(तिलक करके) छत्रपति सरजा शिवाजी की जय !

(क्रमशः ब्राह्मण और बड़े-बूढ़े आशीर्वाद देते हैं)

शिवाजी—(**उठकर समर्थ स्वामी और माताजी को नमस्कार तथा सबको अभिवादन करके**) आप सबने मुझे यह सम्मान देकर बहुत ही गौरवान्वित किया है। यह राज्य आपका है, सारी प्रजा का है। मै तो आपका एक तुच्छ सेवक हूँ, प्रजा का प्रतिनिधि हू, मुझे आज इस अभिषेकोत्सव में पाच व्यक्तियों का अभाव बहुत व्यथित कर रहा है। यह इतना बड़ा राज्य दादाजी के आशीर्वाद का ही फल है। वे आज जीवित होते तो अपने इस फूले-फले उद्यान को देखकर फूले न समाते। पूज्य पिताजी का आशीर्वाद मुझे जन्म-जन्मान्तर के लिये कृत्कृत्य कर देता। पुरुषसिह तानाजी मूलसरे की शुभकामनाएँ मेरे मानस को सहसा उत्फुल्ल कर देती। युद्धनिपुण महान् सेनापति प्रतापराव जी गुर्जर की गम्भीर वाणी से मेरा रोम-रोम पुलकित हो उठता। शौर्य और त्याग के पुज देशमुख जी के दर्शन से मेरी भुजाओं मे शक्ति का समुद्र ठाठे मारता। वे सब मेरे सम्मुख नही है, वे परलोक में है। वही मेरा प्रणाम स्वीकार करे। जिन वीर सैनिको ने अपने अमूल्य रक्त से स्वाधीनता के इस द्रुम को सीचा है, उन्हे भी मै कोटिश प्रणाम करता हूँ। वास्तव में यह तिलक उन्ही के बलिदान का फल है। यह तिलक मेरा नही, उनका है। मै आप सबका पुन अभिवादन करता हूँ। मुझे आशीर्वाद दीजिये कि मै पूर्ववत् आपकी और स्वदेश की सेवा करता रहूँ। यह स्वाधीनता का युद्ध यही समाप्त नही हो जाता। हमारा लक्ष्य भारत-भूमि के बन्धनों को पूर्णत: चूर-चूर करके समुद्र में बहा देना है, हमारा उद्देश्य अभी आगे है। मैं आपका किस प्रकार सत्कार करूँ? (**सिंहासन पर बैठते है**)

(**जयजयकार और हर हर महादेव की ध्वनि होती है। बाजा बजता है**)

(**पटाक्षेप**)

●